
पराग
भारतीय किशोरों का प्रिय मासिक
अप्रैल 1972
This cover

आपके पत्रों से-

0 'पराग' का नया रंग-रूप सचमुच कायाकल्प वाला करिश्मा है. भाई आनंद प्रकाश जी तो मूड के व्यक्ति हैं—जब तक नहीं ठाना, चुप रहे—जब ठान लिया मजा दे दिया.

—वीरेंद्र मिश्र, नई दिल्ली.

0 लगता है कि मुखपृष्ठ पर आप जो किशोरियों के रंगीन चित्र देते हैं, वे बड़े शहरों के विशेष फोटोग्राफर खींचकर आपको भेजते हैं. छोटे शहरों के किशोर-किशोरियां तो सदा इस प्रसिद्धि और सम्मान से वंचित ही रह जाएंगे.

—धीरज बपलियाल, शाहजहांपुर.

☐ शिकायत वाजिब है. इसका निराकरण इस तरह हो सकता है कि दिल्ली के बाहर के जो किशोर-किशोरियां अपने व्यय पर दिल्ली आने के लिए तैयार हों, वे अपने सादे चित्र हमें भेजकर दिन व समय निश्चित कर लें. सादे चित्र उपयुक्त होने पर यहां, प्रकाशित होने योग्य उनकी रंगीन ट्रांसपेरेंसियां तैयार कराने का प्रबंध किया जा सकेगा. —सं.

0 फरवरी अंक में 'मोंटू', 'लाल तार' (कहानियां) अच्छी लगीं. 'विद्यार्थियों में यौन शिक्षा' उपयोगी विषय होते हुए भी मुझे अच्छा प्रतीत न हुआ.

—अविनाशचंद्र वर्मा, छपरा.

0 फरवरी में 'दिल्ली मेल नहीं रुकेगी' और 'बेचैन' (कहानियां) पसंद आईं. फिल्मी कोना में दिलीप साहब से भेंट कराइए.

—ठाकुर मेरचानी, जोधपुर.

0 फरवरी '72 के अंक में 'छोटू-लंबू' की सफलता देखकर प्रसन्नता हुई. कहानियां अच्छी लगीं विशेषकर 'बेचैन'.

—मानुभूषण जौहरी, आजमगढ़.

0 'पराग' के फरवरी अंक में 'लाल तार', 'बेचैन' (कहानियां) अच्छी लगीं. फिल्म स्टार 'दादा' पर भी लेख अच्छा रहा.

—राजेश मेरचानी, जोधपुर.

0 'पराग' का संशोधित रूप निश्चय ही किशोर वर्ग के लिए महान प्रेरणाप्रद है. यदि इसे आज की पत्रिकाओं में सर्वश्रेष्ठ कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी.

—राजेंद्र सोम, कानपुर.

0 'नगर नगर में घूमता आईना' अच्छे मनोरंजन का साधन है. पूरे भारत की सैर कराएगा—ऐसी आशा है.

—हरीशचंद्र साह, बहादुरगढ़.

0 फरवरी अंक में 'लाल तार' (कहानी) का प्रस्तुतीकरण अच्छा लगा. महीने भर 'पराग' का इंतजार अखरता है. मैं तो 'पराग' को पाक्षिक कर देने के पक्ष में हूं.

—अनूपकुमार, बिलासपुर.

0 फरवरी अंक में 'यौन शिक्षा' पर दो जोरदार तर्क पसंद आए.

—राजेंद्रकुमार जैन, कोतमा.

0 'लाल तार' और 'दिल्ली मेल नहीं रुकेगी' (कहानियां) आज युवकों में बढ़ते असंतोष और अनुशासनहीनता पर अच्छे व्यंग्य हैं.

—कु. कमलेश अरोड़ा, दिल्ली.

0 यदि 'पराग' में देश-विदेश के संक्षिप्त समाचार प्रत्येक मास प्रकाशित करें तो 'पराग' निश्चय ही और भी उपयोगी पत्रिका सिद्ध होगी.

—विजयकुमार गुप्ता, नई दिल्ली.

0 फरवरी अंक में 'यौन शिक्षा' पर प्रकाशित दोनों लेखकों ने जिस सशक्त और इस्पाती ढंग से अपने तर्कों को प्रस्तुत किया है—वह प्रशंसनीय है.

—कुमार रत्नाकर, सारण.

0 डाक टिकटों पर लेख डाक-टिकट एकत्र करने वालों के लिए काफी उपयोगी है. आशा है, आप इसी क्रम में 'फोटोग्राफी' व 'देश विदेश की सैर' आदि विषयों पर लेख छापेंगे.

—राजेशकुमार, मंडी.

0 'मोंटू' (कहानी) रोचक लगी. 'छोटू-लंबू' भी भाये. 'नगर नगर में घूमता आईना' इलाहाबाद की ओर कब रुख करेगा?

—दिव्यप्रकाश श्रीवास्तव, इलाहाबाद.

0 फरवरी अंक में 'बेचैन', 'ढम्मा' (कहानियां) पसंद आईं.

—गोविंद चतुर्वेदी, मैनपुरी.

0 यदि आप 'पुराणमल-नवकुमार' की जगह विज्ञान संबंधी समाचार या देशविदेश का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करें तो कृपा होगी. हम सब घर के सदस्यों को 'पराग' बहुत पसंद आता है.

—भूपेंद्रकुमार कोछड़, जालंधर.

0 'नगर नगर में घूमता आईना' के द्वारा किशोरों को अपने अंदर झांकने का मौका मिल रहा है. वैसे तो मैं भी यौन-शिक्षा का हिमायती हूं. १२ फरवरी अंक में प्रकाशित 'रिजवान अहमद' के लेख ने मुझे बहुत प्रभावित किया है. मैं उन का समर्थन करता हूं. इस अंक में 'दिल्ली मेल नहीं रुकेगी' श्रेष्ठ कहानी थी. यह कहानी आजकल के छात्रों के जीवन की बहुत करीब से खींची गई तस्वीर है. मैजब की लिखी कहानी 'मोंटू' भी काफी अच्छी रही.

—विनोदकुमार, चंपारण.

पराग

168 वां अंक

अप्रैल 1972

कहां-क्या?

संपादक: आनंदप्रकाश जैन

कहानी

बुरूंश का फूल

वहां की माया भी अजीब, आदमी भी अजीब, रहन-सहन भी अजीब. और इन सब में सबसे ज्यादा अजीब है जुंग. लंबा-चौड़ा जुंग देखने में बीस वर्ष का और वास्तव में उनतीस वर्ष की आयु का व्यक्ति है. व्यक्ति क्या है बस, एक अनबूझ पहेली. अपने आप में उलझा हुआ, खोया हुआ; अभी यहां बैठ गया, अभी वहां. कोई ठौर-ठिकाना नहीं, कोई निर्धारित दिनचर्या नहीं, कार्य-प्रणाली नहीं—सिर्फ घूमने-फिरने का काम. सरदी में ठिठुरे हुए, सूखे पेड़ों से गिरे बुरूंश के मुरझाए लाल फूलों की पत्तियों को रौंदता, बर्फ के पहाड़ों-घाटियों और चोटियों पर निर्द्वंद्व चला ही जाता, न कोई लक्ष्य, न उद्देश्य. फिर, हजरत जहां बैठ गए, बैठ गए. पेड़ का साया है मगर ठूंठ का. न पत्ती है न शाखों का घनापन. धूप को छाया नहीं, फल लागे अति दूर. फल भी कहां, फूलों तक का नाम नहीं. ले-देकर अर्से में धूप निकली, तो हजरत पेड़ के साए में आ बैठे, और टहनियों की टेढ़ी-मेढ़ी छाया के नीचे लगे धूप तापने. वरना धूप तो आंख उठा कर भी नहीं देखती इनकी तरफ. बादल, बर्फ का गुब्बार और कुहरा, रोजाना ही उगते हुए सूरज को बुर्का पहनाकर परदों से ढकी गाड़ी में ऐसे छिपा कर ले जाते हैं, जैसे नजर लग जाने का डर हो.

सरदी! उफ! . . . पर्ने कहां जो खड़-खड़ करें, दांत जरूर बजने लगते हैं. लेकिन ये हजरत खुद ही पेड़ के साए में आ बैठे कि धूप हमसे नजरें चुराए तो हम भी धूप से अलग ठूंठ के साए में बैठेंगे. धूप मजेदार है, भीनी-भीनी, जनाब, अब तो सरक आइए इधर को, इस ठूंठ में ही क्या रखा है! . . . लेकिन बैठे ही रहेंगे. फिर ख्याल आया, पेट में चूहे दौड़ रहे हैं. अलसाए हुए-से उठे और बर्फीली चोटियों से अपने चेहरे का त्रिकोण नापने लगे. कंधों पर पड़ा हुआ अंगोला संभाला. अब अंगोला कहलो या घुटनों तक का लंबा कोट. वह यहां का आम पहनावा है.

आखिर चल दिए एक दिशा की ओर. दिशा क्या, बस उधर, ढलवान से उतर कर जहां झोंपड़े उलटे-सीधे ढंग से फैले हुए बस्ती का पता देते हैं. लगभग दो सौ झोंपड़ों में सात-आठ सौ की आबादी, बूढ़े-बच्चे और जवान. स्त्रियां ऐसी, जैसे अप्सराएं हों, देखने भर से मैली हों. हर वक्त काम-काज में मग्न. भेड़-बकरी चराने के अलावा हंसना-बोलना, खेलना-कूदना, गप्पें मारना आदि भी तो काम ही है. क्या बूढ़े क्या जवान, जिसे देखो, अपने-अपने कार्य में व्यस्त. जी हां, हुक्का गुड़गुड़ाना भी तो कार्य है. और बच्चे ऐसे अलमस्त, जैसे भगवान अमिताभ ने इन्हें इसी का वरदान दिया हो. न कोई चिंता न काम. बस, उछलकूद में मग्न.

और वह ग्याम की लड़की है न, याची, कुंवारी है अभी, मगर जवान होने वाली है. वह अपने ही झोंपड़े के आगे अपनी सहेली सालू के साथ धूप का मजा ले रही है. दोनों के चेहरे ऐसे, जैसे चित्रकार के कल्पनाचित्र हों, मन-लुभावने, हंसमुख और सुंदर. मगर याची सहेली की बातों में कतई रस न ले पाई. बार-बार उसकी दृष्टि झोंपड़ों के बीच इधर-उधर घूम-फिर कर लौट आती. आखिर सालू से न रहा गया, व्यग्र होकर परेशानी भरे स्वर में बोली, "किसे ढूंढ रही है तू?"

"वो मरा जुंग, अभी तक नहीं आया, उसके लिए मैं मडुए की रोटियां रखी है, आ जाए तो . . ."

"वो मनहूस!"

"हां!" याची ने दूर दृष्टि दौड़ाते हुए कहा.

"कहे देती हूं, याची, मनहूस का साया किसी दिन पड़ गया तो बुरा हो जाएगा. बस्ती भर में कोई उसे अपने मुंह नहीं लगाता."

"अरी, मैं तो यह सोचती हूं, भूखा न मर जाए कहीं!"

"सो तो ठीक, लेकिन कुछ आगे का भी ख्याल रखना चाहिए. तुझे पता है, जब वो पैदा हुआ था तो उसकी मां चल बसी थी. और जब उस का जन्मदिन आया तो उसका बाप एक चट्टान से गिर कर मर गया. पिछले साल जिस जगह उसके पांव का निशान पड़ा था, ठीक उस जगह से एक भेड़ चराने वाला एक गहरे खड्ड में जा गिरा और मर गया. मिरी जी (पुरोहित जी) का कहना है कि जन्मजात मनहूस है इसीलिए गांव भर में सब उसके साए तक से डरते हैं."

"अरी, होने भी दे."

"सो तो ठीक, लेकिन यह जो चीनियों ने हिंदुस्तान पर हमला बोला था, वह भी उसी मनहूस की मनहूसियत का असर था. मिरी जी बता रहे थे, लड़ाई उस दिन से शुरू हुई, जिस दिन मनहूस ने सवेरे-सवेरे उठ कर सबसे पहले सूरज भगवान के दर्शन कर लिए थे."

"दुश्मनी होगी मिरी जी को उससे," जवाब देकर याची दूर देखने लगी, दूर झोंपड़ों के बीच, टेढ़ी-मेढ़ी बल खाती ऊंची-नीची पहाड़ी की बर्फीली जमीन पर, इधर-उधर व्यग्र हिरनी-सी उसकी दृष्टि बार बार दौड़-फिर कर लौट आती. सहसा दूर से जुंग जेमुन-सा झोंपड़ों के बीच दिखाई पड़ा. ऐसे झूम-झूम कर चल रहा है, जैसे कोई शराबी हो. जैसे चल न रहा हो, जमीन रौंदने की कोशिश कर रहा हो. बार बार यही आशंका होती है, अब गिरा तब गिरा. मगर फिर ख्याल आता है, मैंकोंची झूमता हुआ कोई पेड़ एकाएक ही प्राणवान होकर चल पड़ा, यह सोचकर कि अब किसी और बाग में उगेंगे. आखिर चलते-चलते पहुंच ही गए अपने गंतव्य के नजदीक. हंसी के मारे होंठ फटे पड़ रहे हैं. खुशी का जाम छलक पड़ना चाहता है. हालत एकदम खस्ता. चपटी नाक, जैसे किसी ने पत्थर के ऊपर आटे की गोली ही फेंक मारी हो. आंखों की पुतलियों में अगर हरकत न हो, तो सचमुच ही चेहरे पर दो छोटे-छोटे सूराखों का भ्रम हो जाए. और बाल! अयहुम् क्या छटा है! कान भी ढक गए! अब भला सिर पर टोपी की क्या जरूरत! ज्यों-ज्यों पास आते-जाते हैं, त्यों-त्यों मुस्कराहट का तार खिचता ही चला जाता है.

सालू ने देखा तो एकदम याची की ओर मुखातिब होकर बोली, "अब तू भुगत इसे, मैं तो चली. भगवान बुद्ध इसके साए से तेरी रक्षा करें," और सालू तेजी से भाग खड़ी हुई.

"ले, रे!" याची ने मडुए की दो रोटियां जुंग की ओर बढ़ाईं और उसे डांटते लहजे में बोली, "गांव भर में कोई तुझे रोटी देने को तैयार नहीं. एक मैं हूं जो इतना ख्याल रखती हूं. और तू फिर भी वक्त पर नहीं पहुंचता." डांटने के बाद याची ने रोटियां उसकी ओर बढ़ा दीं और गुस्से से देखने लगी.

मगर यह क्या, जनाब खामोशी से मुस्करा रहे हैं, एकटक देख रहे हैं याची की ओर. भूल गए रोटी को. आंखें याची के सिर पर कुछ देर घूम-फिर गईं, जैसे आशीर्वाद देने के लिए हाथ बढ़ा हो, और फिर सारी की सारी याची उसकी दृष्टि में समा गई. और वे आंखें, जैसे कह रही हों, "प्यारी बच्ची, इस जालिम दुनिया में तू कैसे जन्म ले बैठी! आखिर इन पथरीली चट्टानों में तुझ जैसे फूल का क्या काम! यानी मरुस्थल में अमृतरस की धारा और जेठ की तपती दुपहरिया में शबनम की फुहार! आ तुझे चूम लूं. इस चोरेबाज जालिम और निष्ठुर दुनिया में तुझ पर साया बन कर छा

जाए. यहू को काली-काली घटाएं हैं और यहू की आंधी-बवंडर और तूफान हैं, यह किसी पर रहम नहीं खाते. किसी पर भी नहीं. यहां पत्थर से पत्थर टकराया करते हैं और रेत बरसती है. कोई किसी के दिल का जिम्मेदार नहीं, किसी का खैर-ख्वाह नहीं. हर तरफ चट्टानें टूटती-फूटती रहती हैं. जरा संभाल रखना, कोई तेरे नन्हे मासूम फूल जैसे दिल को न तोड़ डाले, कहीं पिस न जाए तेरा दिल. . . .''

आंखों-आंखों में जुंग ने जाने क्या क्या कह डाला, क्योंकि उसे याची की फटकार बड़ी अच्छी लग रही थी. 'इतना प्यार! इतना सुख! इस मानसरोवर के उजले-श्वेत हंसों का विवेक क्यों न फीका पड़ जाए ऐसी निश्छल निर्मलता के आगे!' उसकी इच्छा हुई, वह आगे बढ़कर उसकी कलाई थाम ले और उसे कहे, ''चल, कहीं दूर चलें. वहां, जहां कोई न हो . . . . . बर्फीली घाटियों के दूर तक फैले सन्नाटों में, अनंत आकाश की छाया तले, अनंत पहाड़ों की गोदियों में. उस बाग में जहां गुलची और सैयाद का कोई डर न हो, आंधी-पानी और पतझार का कोई खौफ न हो. चल!' परंतु वह जबान से एक लफ्ज भी तो नहीं निकाल पाया. बस, बुद्धू की तरह देखता रहा उसकी ओर. आंखों ही आंखों में जाने क्या-क्या बकता चला गया क्षणभर में ही.

ए लो जी! इतनी-सी देर में पहुंच गए कहां से कहीं. हजारों-लाखों बातें दिल और दिमाग को ले उड़ीं, पंख लग गए. सहसा याची बोली, ''अब पकड़ भी अपनी रोटियां.''

और उसके हाथ बड़े खोए-खोए-से. आंखें वहीं अटकी रहीं—याची की ओर. रोटियां लेकर वहीं बैठ गया—उकडूं. याची मुड़ गई भीतर झोंपड़े की ओर. वह क्षणभर टकटकी बांधे देखता रहा उसे. उसने महसूस किया, जैसे याची लड़की नहीं है, कोई देवी है. दया-सहानुभूति और स्नेह की देवी. एक दिव्य मूर्ति. उसे लगा, उसका हृदय एक बहुत बड़ा प्रदेश है, जिसमें वह आजादी से खेल-कूद रहा है और उसमें एक और बस्ती है, जिसमें हजारों-लाखों इंसान बसे हैं. और देवी याची सबको प्रसाद बांट-बांट कर मानवमात्र को प्रेम का अनमोल वरदान दे रही है. बिलकुल ऐसे ही झोंपड़े हैं, ऐसे ही घर. ऐसा ही उत्ता-लुकता आकाश, जो पर्वतों की चोटियों को चूम रहा है. धुआं बनकर जा आता है और पहाड़ों को बांहों में भर लेता है. ऐसी ही ठंडी हवाएं और तीखी सरदी है, मगर साथ ही याची के हृदय में जलती मानव-प्रेम की मद्धम आंच भी है. और बुरूंश के लाल फूलों से जमीन हंस रही है, हवाएं झूम रही हैं, दिशाओं में महक है और आसमान अंगड़ाइयां ले रहा है.

'ए री, प्रेम की देवी! मुझे अपने हृदय के प्रदेश में बसाए रहना. कभी वक्त आया तो मैं ये बुरूंश के सारे फूल तेरी माला में गूंथ दूंगा. ये सोने चांदी के पहाड़ और यह झरनों का संगीत, सब तुझे दहेज में दे दूंगा. आसमान के चांद से तेरा ब्याह रचाऊंगा. . . मगर देख, किरि जी को मत बुलाना अपने प्रदेश में और इन अंधविश्वासी गांव वालों को भी नहीं. कहीं

वीरकुमार 'अधीर'

ये मिल कर मेरे सपनों का देश न उजाड़ डालें. इस देश में पंछी आजादी से उड़ रहे हैं, शिकारियों की नजर से छिपाकर रखना अपने हृदय के प्रदेश को.'

जुंग खोया-खोया-सा रोटी का टुकड़ा तोड़ता है और खोया-खोया-सा उसे चबाता जाता है, और धीरे-धीरे उसने ख्यालों में डूबे-डूबे दोनों ही रोटियां समाप्त कर डालीं. सहसा उसे सामने से आता हुआ याची का बाप प्यांग दिखाई दिया और उसके सारे स्वप्न एकाएक ही टूट गए. वह उठा और तेजी से चल दिया वहां से. अच्छा हुआ, उसने देखा नहीं, वरना याची को जो सहना पड़ता सो तो अलग, और भी जाने क्या-क्या बवाल मचता इस छोटी-सी दुनिया में.

वक्त गुजर गया. बहुत-से सपने गुजर गए और बहुत-सी बातें गुजर गईं. दुनिया वैसे ही चल रही है. वही गांव वाले हैं, जो उसे सदा ही नफरत की नजर से देखते आए हैं. वही याची है और उसके हृदय का प्रेम भरा प्रदेश है, जिसमें वह चोरी छिपे विचरण करता है. और वही जुंग है. वह स्वयं—निकम्मा, मनहूस और लावारिस कहा जाने वाला उन्नीस वर्ष का जुंग.

जुंग की जिंदगी गुजरी इन्हीं प्रदेशों में, इन्हीं बादलों-कुहासों और बर्फीले अंधड़ों के बीच. एक जमाना बीत गया. मगर इन पहाड़ों पर कभी कोई तूफान ऐसा नहीं चला, जिसने ये पहाड़ मांगे हों, यह मिट्टी और ये बुरूंश के कुंज चाहे हों. तूफान बरसों से आते-जाते हैं. वे



फूलों को दूर-दूर तक बिखेर जाते हैं, घरों की छतों का घास-फूस चुन ले जाते हैं, मकानों को तोड़-फोड़ डालते हैं, कभी-कभार एकाध जान से भी खिलवाड़ कर बैठते हैं. मगर इंसान ने जिंदगी की सारी ताकतों के साथ हमेशा उस तूफान का डटकर मुकाबिला किया. टूटे हुए घर बना लिए, उजड़े हुए खेतों को उगा लिया और बुरूंश के टूटे-फूटे कुंजों को नए फूल बख्श दिए.

अबकी बार जो तूफान आया है, वह सारी जमीन मांगता है, बुरूंश के फूल मांगता है, इन खोहों और पहाड़ों पर हंसती हुई प्रकृति की मासूम भोली-भाली मुस्कानों की शांति को नोच डालना चाहता है. इन पंछियों के गीतों को अपने पिंजरे में बंद कर लेना चाहता है. वह चाहता है, हर बसंत पर उसका राज्य हो, हर फूल उसकी तमन्नाओं के इशारों पर खिले और मुरझा जाए. जो भी है, जैसा भी है, सब उसका हो जाए. और वह, इस जमीन पर शासन करे, जहां सदियों से उनके पूर्वज सांस लेते आए हैं, मिट्टी की काया में भोली-भाली मूरतों ने जहां आंखें मल-मल कर सवेरों के स्वप्न देखे हैं. उन्हीं आंखों को फोड़ देने का भयानक इरादा लेकर आया है यह तूफान. इसी भयानक इरादे को लेकर वह कई दिनों से पहाड़ों की भोली-भाली चांदी-सी मुस्कानों पर बारूद के ध्वंसकारी बादल उड़ा रहा है. ऐसा लगता है, पशु-पक्षी को गोलियों का निशाना बना डालेगा, फूल-फूल को बारूद की आग में भस्म कर देगा.

मगर इन्सान, जो हमेशा से हर मुसीबत का मुकाबिला करता रहा, जिसने पहाड़ों में रास्ते बनाए हैं, आसमानों के सीने बेध कर स्वर्ग के देवता को चुनौती दी है, हर तूफान को हंसते-हंसते छाती पर झेल जाने वाले इन्सानों की एक टुकड़ी इस नए तूफान का मुकाबिला करने के लिए आगे बढ़ी. बस्ती से पांच-सात मील दूर भारतीय सैनिकों की यह फौजी टुकड़ी कई दिनों से चीनियों का मुकाबिला कर रही है.

और आखिर, दानव के पंजे तोड़ डाले गए. उसकी अंगुली-अंगुली में दर्द कसकने लगा. ...... समाचार आया, इस चौकी पर भारतीय सेना विजयी हुई और चीनियों ने अपनी फौज हटा ली. भारतीय सैनिकों का दस्ता विजय-गर्व के साथ लौट गया.

जुंग खामोश बैठा इन पहाड़ों की वीरानी को देख रहा है. देख रहा है इन ऊंचे-ऊंचे बारूदी बादलों के भय से कांपते वृक्षों को. सारा देश वीरान है—पहाड़, घाटियां, आसमान और जैसे जुंग भी इस वीरानी का एक हिस्सा बनकर रह गया. चारों ओर महायुद्ध की आशंका-सी छा गई है. कोयल और काकू के राग सो गए. फूलों की मुस्कराहटें उदास हो गईं. और शाम के घने और उदास साए पर्वतीय अंचलों पर फैलने लगे. एक अजीब-सी वीरानी छा गई. युद्ध और महायुद्ध! बारूद के बादल! और बिजलियों का कहर! और महानाश का खुला निमंत्रण! महाप्रलय की भयंकर विभीषिका!

लो, रात भी हो गई और पहाड़ की एक खोह में सिमटा जुंग न जाने कब सो गया. चांदनी में पहाड़ों पर सोना-चांदी छिड़ गया. सपनों की दुनिया जागने लगी. बर्फीली ठंडी हवाओं के झोंके पेड़ों की पत्तियों को गुदगुदाने लगे. ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों ने सिर उठाया और आसमान की ओर नजरें उठाकर देखा, सब ओर शांति और निर्मलता! खामोशी और मादक चांदनी! और लावारिस जुंग की खोह में पड़ी जिंदगी!

बस्ती भर में घरों के द्वार बंद हो गए थे. और याची काफी देर पहले ही सपनों में खो गई थी. सब ओर सुख-चैन के दीपक जल रहे थे. आसमान नीला-नीला, और जमीन उजली-उजली, और फूल लाल-लाल और चांदनी सुनहरी—प्रकृति अपने सारे रंगीन प्रसाधनों के साथ बैठी थी.

सहसा एक फुंकार सारे वातावरण में लहरा गई. एक 'धम' का धमाका हुआ. एक काला-काला बादल उठकर आकाश की नीलिमा, चांदनी के सुनहलेपन और जमीन की उज्ज्वलता पर कालिख पोत गया. हर ओर दहशत नाच उठी. चीखों और पुकारों के वातावरणों से प्रकृति रो पड़ी.

धोखेबाज चीनियों ने धोखे से बस्ती पर हमला बोलकर लूट-पाट शुरू कर दी. निरीह भेड़ें मिमिया-मिमिया कर भगवान अमिताभ को पुकारने लगीं. बच्चे मांओं की गोदियों में सिमट गए और मांएं घरों के कोनों में जा छिपीं. गोलियां चलती रहीं! कभी किसी मां के सीने से किसी बच्चे का शव गिर पड़ता, कभी कोई मां बच्चे को अनाथ कर जाती. मार-काट मच गई. नमक, भेड़, अन्न, ऊन जो भी मिलता, सभी समेटा जा रहा था. फिर जवान-जवान औरतों को चुन लिया गया. घरों का रुपया-पैसा समेटा गया. जिसने देने में जरा आनाकानी की वह सदा की नींद सुला दिया गया. चीखें-पुकारें गलों में अटकी ही रह गईं.

सहसा, पहाड़ की खोह में बेसुध सोए जुंग की आंख खुल गई. फिर दूर बस्ती से आती हुई चीखें-पुकारें उसकी छाती पर हथौड़ों के प्रहार करने लगीं. वह हड़बड़ाया-सा उठा और तेजी से खोह से बाहर निकल कर पहाड़ की चोटी की ओर भागने लगा. पहाड़ उसी प्रकार रो रहे थे और बच्चों की मुस्कराहटें किलकारियां मार रही थीं, बेबस असहाय इन्सान दर्द से कराह रहे थे. जुंग भागते-भागते चोटी पर जा चढ़ा. दूर, बस्ती में, मशालों के जलते प्रकाश में परली ओर नीचे ढलवान पर चीनियों की बर्बरता का नंगा नाच देखकर वह हतप्रभ रह गया.

एकाएक, एक बिजली-सी उसके मस्तिष्क में कौंध गई. सामने ही घरों में आग लगाई जा रही थी. घरों के गुनगुनाते दरवाजों से आग की भयंकर लपटें उठ-उठ कर आसमान की ओर बांहें पसार रही थीं और भगवान अमिताभ से जिंदगी और दया की भीख मांग रही थीं. मगर आसमान खामोश रहा, भगवान अमिताभ नहीं पिघले. जुंग तेजी से भागता-भागता ढलान से उतरता चला गया. फिर, जलते झोंपड़ों के बीच से उसकी भागती छाया याची के घर के पास जाकर एकाएक रुक गई. परंतु फिर वह वापिस ही लौट गया. कुछ न बोला. वह हमेशा ही खामोश रहता है, सब से अलग-अलग और अकेला. वह जानता है कि अगर इस वक्त वह किसी के समक्ष पड़ गया तो लोग चीनी आक्रमण का सारा दोष उसी को देंगे, उसकी मनहूसियत ही अपराधिनी ठहरा दी जाएगी. इसी लिए वह वापिस लौट गया अपनी खोह की ओर, जहां वह आराम से रहता है. न ये गांव वाले हैं न इनकी प्रताड़नाएं. इन सब से अलग प्रकृति की वात्सल्यमयी गोद है, जिस ने उसे जन्म दिया है, उस भगवान अमिताभ की छाया है.

वह आकर चुपचाप वहीं बैठ गया और खो गया उन्हीं पाशविकतापूर्ण दृश्यों की स्मृति में, जिन्हें उसने अभी-अभी देखा है और जिनके चित्र अभी तक उसके मस्तकपटल पर ज्यों के त्यों घूम रहे हैं. वही लपटें, वही धुआं और उनके बीच जलती हुई चीखें-पुकारें.

कुछ देर बाद बिलकुल शांति छा गई, सन्नाटा हो गया. ऐसा लगता था, चीनी राक्षस मनमानी करते-करते थक कर सो गए. फिर मौत-सी अविच्छिन्न खामोशी सारे वातावरण पर कफन की तरह बिछ गई. काफी देर खामोश बैठे रहने के बाद जुंग उठा और चल दिया वहां, बस्ती की ओर! शायद यह देखने कि कितने बचे हैं और कितने मारे गए! या, याची को सुरक्षित देखकर तसल्ली करने.

•

जुंग भी अजीब आदमी है. कुछ पता नहीं चलता इस का. न कुछ बोलेगा न किसी से कुछ बात करेगा, बस चुपचाप सोचते रहना. आखिर बस्ती में ही जा पहुंचा. एक अजीब-सी सनसनी सारी बस्ती में छा गई, लाशों पर कफन जैसा सन्नाटा छा गया था. कब्रिस्तान जैसी शांति में भय से हवाएं और पेड़-पौधे खुसफुसा रहे थे. इधर-उधर मशालें हाथों में लिए कुछ चीनी सैनिक अब भी घूम रहे थे. बस्ती की परली सीमा पर चीनियों का कैम्प लग गया था. वह सबसे छुपता-छिपता सीधा याची के घर की ओर बढ़ गया. उदास मुख याची किसी आशंका से डूबी हुई चुपचाप दरवाजे पर खड़ी हुई थी. क्षणभर वह उसकी ओर देखता रहा. फिर, उसने धीरे से फुसफुसाती आवाज में पुकारा, "याची!"

और याची ने एकाएक चौंक कर उसकी ओर

(शेष पृष्ठ 29 पर)

परीक्षा शुरू होने में आधे घंटे की देर थी. शाला के मैदान में विद्यार्थी इकट्ठे हो गए थे. एक विद्यार्थी को कई विद्यार्थियों ने घेर रखा था. यह विद्यार्थी शाला में इसी वर्ष आया था. नाम था उसका विवेक, परंतु विवेक उसे छू भी न पाया था.

वह एक गुंडा किस्म का लड़का था. उसकी वेशभूषा एकदम मॉडर्न थी. तंग मोहरी का पैंट, पॉइंटेड जूते, खुला टीशर्ट और कॉलर खड़े.

एक विद्यार्थी ने विवेक को छेड़ा, "बच्चू, आज तुम्हारी एक न चलेगी. नकल करना तो दूर, तुम सिर उठा कर भी न देख पाओगे."

विवेक ने एक झटका देकर अपने बालों को पीछे फेंका और लापरवाही से पूछा, "क्यों? ऐसा कौन तीसमारखां इनविजिलेटर आने वाला है?"

"अरे, वही शुक्ला जी, अपने केमिस्ट्री टीचर. बड़ी पैनी नजर है उनकी. किसी की क्या मजाल, उनके सामने नकल करे." पहले ने जवाब दिया.

विवेक ने पॉकेट में हाथ डाल कर एक डायरीनुमा छोटी कुंजी निकाली और कहा, "अपने काम को कोई रोक सकता है! यह देखो, अपना मसाला तैयार है." इतने में टन-टन-टन-टन घंटी बजी. लड़के अपने-अपने कमरों में जाकर अपनी-अपनी जगहों पर बैठ गए.

थोड़ी ही देर में शुक्ला जी परीक्षा कापियां और पर्चे लिये हुए कमरे में आए. कापियां और पर्चे बांट दिए जाने के बाद कमरे में सन्नाटा था.

शुक्ला जी ने जेब से एक चाकू निकाला और उसे खोलकर वह अपनी पेंसिल छीलने लगे. सभी

कहानी

इस चाकू से मत मारो



विद्यार्थी यह जानते थे कि शुक्ला जी को अपने इस विशेष चाकू से पेंसिल बनाने में बड़ा मजा आता था. यही नहीं, वह किसी भी विद्यार्थी की पेंसिल छीलने के लिए सदैव तत्पर रहते थे. आज भी हमेशा की तरह कई विद्यार्थियों ने अपनी पेंसिलें छीलने के लिए उनको दीं. टेबिल से टिककर वह पेंसिलें छीलने लगे. विवेक मौके की ताक में था. शुक्ला जी को व्यस्त देख उसने कुंजी निकालने के लिए जेब में हाथ डाला. परंतु दूसरे ही क्षण बिजली की तेजी से उसका हाथ जेब के बाहर आ गया.

शुक्ला जी गरज रहे थे, "सुनो, मुझे तो आप सब लोग जानते ही हैं. मेरे रहते किसी प्रकार की नकल नहीं हो सकती. नकल करते किसी को भी पाया जाएगा तो मैं पेपर छीन लूंगा. मेरे पास नकलचियों के लिए किसी प्रकार की भी सहानुभूति नहीं है." सब लोग विवेक की ओर देख रहे थे. सब जानते थे कि वह नकलचियों का निडर उस्ताद है. विवेक सिर नीचा किए हुए हाथ में कलम लिए बैठा था.

वह सोच रहा था, "आज तक मैंने हमेशा नकल की है, मैं किसी से नहीं डरा. क्या आज इस शुक्ला के बच्चे से हार खानी पड़ेगी!"

यद्यपि अन्य विद्यार्थी लिखने में मग्न मालूम होते थे, सब के मन में एक ही प्रश्न था, आज किस की जीत होगी? शुक्ला जी की या विवेक की?

लगभग आधे घंटे के बाद शुक्ला जी ने देखा कि विवेक ने अपनी डायरी निकाल ली है और बड़े आराम से उस में से नकल कर रहा है.

शुक्ला जी ने जोर से खांस कर विवेक को सावधान किया. सब लड़के रह-रहकर शुक्ला जी और विवेक की ओर देखने लगे.

शुक्ला जी का चेहरा गंभीर हो गया. वह विवेक के पास आकर खड़े हो गए. पर विवेक? उसने अपने किसी भी हाव-भाव से शुक्ला जी के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया.

शुक्ला जी ने उससे कहा, "तुम नकल कर रहे हो, विवेक?"

"हां, कर रहा हूं," कहते हुए विवेक ने अपना काम जारी रखा.

शुक्ला जी ने कड़ककर कहा, "खड़े हो

एस. व्ही. कानडे

जाओ!"

विवेक पक्का नकलची तो था ही, साथ ही विद्यार्थी गुंडों का उस्ताद था. उसने कहा, "मुझे मत छेड़िए, सर. इसका फल बुरा होगा."

शुक्ला जी की आंखों में खून उतर आया. उन्होंने विवेक की कापी और डायरी छीन ली और बोले—"मैं सुपरिंटेंडेंट से शिकायत करूंगा. तुम नकल करते पकड़े गए हो."

शुक्ला जी ने उसी समय सुपरिंटेंडेंट को बुलावा भेजा. वह विवेक की कापी और डायरी लिए हुए सुपरिंटेंडेंट की प्रतीक्षा कर रहे थे.

विवेक तेजी से उठा, शुक्ला जी के पास गया और बोला "इस समय मैं कुछ नहीं कहता,

पर शीघ्र ही आपको इसका पछतावा होगा. मैं इस अपमान का बदला लेकर रहूंगा," कहते हुए विवेक ने टेबिल पर रखा हुआ शुक्ला जी का चाकू जेब में रखा और कमरे से निकल गया.

सब लोग देखते ही रह गए. सुपरिंटेंडेंट के आने पर शुक्ला जी ने लिखित रिपोर्ट उन्हें दी और विवेक की कापी और डायरी सौंप दी.

उस दिन विद्यार्थियों और सभी शिक्षकों के लिए चर्चा का एक ही विषय था. शुक्ला जी और विवेक. सबने शुक्ला जी को सम्हल कर रहने की सलाह दी.

•

उस रात को लगभग दस बजे शुक्ला जी अपने टेबिल पर बैठे पेंसिल से कुछ लिख रहे थे. कुछ दिन से वह घर में अकेले थे. उनकी पत्नी और बच्चे शहर के बाहर किसी संबंधी के विवाहोत्सव में गए हुए थे. शुक्ला जी के कमरे के सामने एक बरांडा था. सभी दरवाजे खुले थे.

कुछ देर बाद शुक्ला जी को कुछ ऐसा आभास हुआ कि बरांडे का खुला दरवाजा किसी ने बंद किया है. उन्होंने इसे अपना भ्रम समझा.

वह लिखने में इतने मगन थे कि उन्होंने यह न देखा कि एक व्यक्ति उनके कमरे में आ गया.

इसी समय उनकी पेंसिल की नोक टूट गई. उन्होंने हमेशा की तरह पेंसिल छीलने के चाकू को उसके निर्दिष्ट स्थान से उठाना चाहा, पर वहां कुछ न था. उन्हें कुछ स्मरण हो आया. वह अपने आप ही बड़बड़ाए, 'मेरा चाकू अब यहां कहां! वह तो विवेक के पास है.'

अचानक बाजू के कोने से आवाज आई, "विवेक आपकी सेवा में उपस्थित है, शुक्ला जी! और आपका विशेष चाकू उसके हाथ में है." आवाज डरावनी थी, पर उसमें कंपन था.

शुक्ला जी ने सिर ऊपर उठाया. सामने विवेक खड़ा था, वह बोले, "विवेक, इस समय!"

"जी, हां, मैं विवेक ही हूं. आप अपनी कुर्सी से जरा भी मत हिलिए. मैं अकेला नहीं हूं. मेरे दो उस्ताद बाहर खड़े हैं," विवेक ने कहा.

शुक्ला जी समय की गंभीरता को समझ गए. चुपचाप बैठे रहे. "बैठ जाओ न!" शुक्ला जी के गंभीर स्वर ने आग में घी का काम किया.

विवेक कड़ककर बोला, "मैं बैठने नहीं आया हूं, बदला लेने आया हूं. आपने सबके सामने मेरा अपमान करने की हिम्मत कैसे की?"

"मैं सब कुछ जानता था. पर मैं हमेशा अपना कर्तव्य पूरा करता हूं और विद्यार्थियों का भला चाहता हूं," शुक्ला जी ने उत्तर दिया.

शुक्ला जी का निडर उत्तर सुनकर विवेक थोड़ी देर के लिए चुप रहा. फिर बोला, "मुझे पकड़कर आपने अपना कर्तव्य तो पूरा किया, पर मेरा बहुत बुरा किया. मुझे पास होने से रोक दिया."

शुक्ला जी ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "अधिकांश नकल करने वाले विद्यार्थी यह नहीं जानते कि नकल करके के पास होने पर वे अपना और समाज का अहित करते हैं."

विवेक ने शुक्ला जी के चाकू को खोल लिया था. वह उपहास से बोला, "आपका लेक्चर कितना ही अच्छा क्यों न हो, मैं अपना बदला लेकर रहूंगा—आप के ही चाकू से."

शुक्ला जी कुछ सोचने लगे. अपने प्रिय चाकू को विवेक के हाथ में देखकर उन्हें उस चाकू का इतिहास याद आ गया. उनकी आंखों में आंसू आ गए—उन्होंने आंसुओं को न रोका.

विवेक ने कुछ उपहास से कहा, "मुझे पकड़ते समय आप गरज रहे थे, अब रो रहे हैं!"

शुक्ला जी ने शांति से उत्तर दिया, "रोने का कारण डर नहीं, तुम्हारे हाथ के चाकू का इतिहास है. तुम नहीं जानते कि मुझे वह चाकू क्यों इतना प्रिय है!"

"न मैं उसे जानना चाहता हूं," विवेक ने तिरस्कार से कहा.

"ठीक है. यदि तुम यह सोचते हो कि मुझे मारने से तुम्हारा बदला पूरा हो जायेगा, तो मैं तैयार हूं. पर मुझे मारने से पूर्व मेरी एक इच्छा पूरी करो," शुक्ला जी ने गंभीर वाणी में कहा.

"कहिए, आपकी इच्छा सुनने पर देखा जाएगा," विवेक ने तीखे स्वर में कहा.

"मैं यह नहीं चाहता कि मुझे मारने के लिए तुम मेरे इस चाकू का उपयोग करो. मैं तुम्हें बड़ा चाकू दे सकता हूं," शुक्ला जी ने कहा.

शुक्ला जी की बातों ने विवेक को थोड़ी देर के लिए स्तंभित कर दिया. वह सोचने लगा, "शुक्ला जी इस चाकू से मरना क्यों नहीं चाहते, भले ही किसी दूसरे चाकू से मारे जाएं. इसमें उनकी कोई चाल तो नहीं!"

उसने कड़ककर कहा, "कहां है दूसरा चाकू?" फिर कुछ सोचकर वह स्वयं ही बोला, "आपके चाकू की मुझे जरूरत नहीं. मेरे पास और भी चाकू हैं. यह लीजिए, आपका चाकू, मैंने अलग कर दिया. यह दूसरा बड़ा चाकू तैयार है. अब आप तैयार हो जाइए."

शुक्ला जी ने संतोष के साथ कहा, "आज दिनेश के इस चाकू की लाज रह गई है. दिनेश को दिया वचन मैं कम-से-कम अपने जीवित रहने तक पूरा कर सका हूं." उन्होंने विवेक की ओर मुड़कर कहा, "अब मैं तैयार हूं. परंतु मैं तुमसे एक प्रार्थना और करना चाहता हूं कि मेरा यह चाकू तुम्हारे या किसी के भी पास रहे, उसका उपयोग किसी को मारने-धमकाने के लिए न करना."

इस प्रार्थना का विवेक पर कुछ असर हुआ.

शुक्ला जी पुनः बोले, "विवेक, यदि तुम चाहो तो मैं एक पत्र लिख देना चाहता हूं कि मैं स्वयं आत्महत्या कर रहा हूं, ताकि मेरे खूनी की तलाश न की जावे."

शुक्ला जी के इस अंतिम अस्त्र का विवेक पर प्रभाव पड़ा.

थोड़ी देर बाद वह शुक्ला जी से बोला, "आपके इस व्यवहार से मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है. कुछ भी करने के पूर्व मैं इस चाकू का इतिहास जानना चाहता हूं."

विवेक में अचानक यह परिवर्तन देखकर शुक्ला जी ने संतोष की सांस ली और बोले, "ईश्वर की बड़ी कृपा है जो तुम इस चाकू का इतिहास जानना चाहते हो. पहले तुम इस बेंच पर आराम से बैठ जाओ और सुनो..."

•

"15 वर्ष पूर्व की बात है. हमारी शाला में दसवीं कक्षा में एक नया विद्यार्थी भर्ती हुआ. एक-दो माह बाद मालूम हुआ कि विद्यार्थी बुरी संगत में था. अपने आवारा दोस्तों के कारण वह बिगड़ चुका था. यही नहीं, वह अपने दोस्तों को चाकू दिखाकर डराने-धमकाने लगा था. उसके विरुद्ध खुले आम शिकायत करने की किसी की हिम्मत नहीं होती थी. शहर के कुछ गुंडों से उसका परिचय हो जाने के कारण अधिकांश शिक्षक उससे डरते थे.

उसके बिगड़ने का मुख्य कारण था उसके घर की परिस्थिति. छह भाई-बहनों में वह सबसे बड़ा था. उसके पिता फैक्टरी में मैकेनिक थे, जो सुबह 7 बजे घर से निकल जाते थे और शाम को 8 बजे घर आते थे. इसके कारण दिनेश पर निगरानी रखना उनके बस की बात नहीं थी. निस्संदेह वह बुद्धिमान था, परंतु उसकी भावना-प्रधानता का उपयोग उसके साथियों ने उसे समाज के विरुद्ध बहकाने में किया.

"मैं किसी मौके की ताक में था कि उसकी भावना-प्रधानता और बुद्धि का उपयोग उसे सुधारने में करूं. एक दिन मुझे किसी शिक्षक की अनुपस्थिति में दिनेश की कक्षा में पढ़ाने जाने का मौका मिला. मैंने मन में एक निश्चय कर लिया था. मैंने विज्ञान के वरदान या अभिशाप होने पर बातचीत आरंभ कर दी. पिटा-पिटाया विषय था, लड़कों में काफी उछल-कूद होने लगी.

"बातचीत करते हुए मैंने फास्फोरस का उल्लेख किया और कहा, 'यह एक बड़ा विचित्र तत्व है. हमारे शरीर में इसका होना आवश्यक है. जो साधारण हवा में घना सफेद धुआं देकर आप ही आप जल उठता है. मनुष्य उसका उपयोग मानव-समाज के हित और अहित दोनों के लिए करता है. मनुष्य टानिक के रूप में इसका सेवन करता है. माचिस में इसका उपयोग कर वह एक अग्नि जैसे राक्षस को एक डिबिया में बंद करके अपना सेवक बना सकता है. और उसी फास्फोरस का उपयोग आग लगाने वाले

कमरों में किया जाता है और देखते-ही-देखते हरी-भरी बस्तियां तहस-नहस कर दी जाती हैं."

'थोड़ा ही मैं ठहर कर मैंने पूछा, 'तुम लोगों ने फासफोरस को जलते तो अवश्य देखा होगा?'

'पूरी क्लास चिल्ला पड़ी, 'नहीं दिखाया, सर, आप ही दिखाइए न.'

'यही मेरा मौका था. मैंने कक्षा को शांत किया और फासफोरस की बोतल, एक चीनी मिट्टी की कटोरी, एस्बेस्टास की प्लेट, सूजा, टीन का ढक्कन और एक चमीटी क्लास में मंगवाई.

'मैं प्रयोग की तैयारी करता जाता था और बोलता जाता था, 'यह देखो, ये एस्बेस्टास की प्लेट है. इस में आग नहीं लग सकती. और इसीलिए इसका उपयोग करते हैं. इसके ऊपर ढाल-पानी के लिए मैंने टीन का ढक्कन रख लिया. इसी पर अब मैं फासफोरस जलाऊंगा. देखो, इस बोतल में पानी भरा है और इस पानी के भीतर डुबोकर फासफोरस को रखा जाता है. इसे पानी के बाहर नहीं रखते, क्योंकि वह जल उठता है. मैं एक बहुत छोटा टुकड़ा कटोरी के भीतर पानी में ही काटूंगा.'

'मैंने चमीटी से फासफोरस का टुकड़ा निकाल कर कटोरी के पानी में डाल दिया. फिर मैंने नाटक किया, 'चाकू तो है ही नहीं. तुम लोगों में से किसी के पास चाकू है?'

'मैं चाहता था कि दिनेश अपना चाकू निकाले, पर वह चुपचाप बैठा था. एक लड़के ने एक छोटा-सा चाकू मेरी ओर बढ़ाया, पर मुझे तो दिनेश का चाकू चाहिए था. मैंने उस चाकू को देखकर कहा कि यह चाकू नहीं चलेगा.

'इतने में दिनेश अपनी जगह से उठा. उसके हाथ में एक चाकू था. उसने मुझे वह चाकू दे दिया. मैंने चाकू से स्फुर का टुकड़ा काटा और उसे पानी से निकाल कर टीन के ढक्कन पर रख दिया.

'फिर मैंने कहा, 'वैसे तो पांच मिनट बाद यह टुकड़ा स्वयं जल उठेगा, पर प्रयोग जल्दी करने के लिए हमें इसका तापक्रम बढ़ाना होगा.'

'फिर मैंने सूजे की नोक को फर्श पर घिसा और उससे फासफोरस का स्पर्श किया. उसी क्षण फासफोरस नीली लौ के साथ भभक उठा और घना सफेद धुआं दिखाई देने लगा. कक्षा में एक प्रकार की हर्ष-ध्वनि फैल गई. प्रयोग बड़ा आकर्षक था. थोड़ी ही देर में आग बुझ गई.

'मैंने कहा, 'देखी तुम लोगों ने फासफोरस की करामात? शैतान के हाथ में यह राक्षस बन जाएगा और इंसान के हाथ में वरदान.'

'फिर मैंने दिनेश का चाकू उठाया. उसको और बारीकी से देखा और भावविह्वल होकर कहा, 'दिनेश! यह चाकू भी बड़ा अच्छा है. आज इसने इसका प्रयोग एक अच्छे कार्य के लिए किया है. यही चाकू शैतान के हाथ में पड़ जाए तो वह इससे लोगों को डराएगा, डॉक्टर के हाथ में यही चाकू कुछ और कमाल कर दिखाएगा. एक सर्जन इस चाकू से मानव को मौत के चंगुल से बचाएगा.'

"फिर मैंने दिनेश को बुलाकर कहा, 'लो, दिनेश! अपना चाकू लो. तुम तो इसका उपयोग पेंसिल छीलने के लिए ही करते होगे.'

"इसी समय किसी विद्यार्थी ने परमाणु शक्ति और मानव का विषय छेड़ा, 'परमाणु शक्ति मानव के हाथ में वरदान है या अभिशाप?'

'मैंने कहा, 'यह तो राजनीतिज्ञों पर निर्भर रहेगा' इतने में घंटी बजी. मैं कक्षा के बाहर आ गया. कई लड़कों ने दिनेश को घेर लिया था. एक लड़का कह रहा था, 'आज तो इस चाकू ने अच्छा काम किया है. एक अच्छा प्रयोग दिखाने में सहायक हुआ है, वरना यह डराया करता था.'

●

इतना कहकर शुक्ला जी ने विवेक की ओर देखा. विवेक के चेहरे से स्पष्ट था कि इस चाकू के इतिहास का विवेक के गहरा प्रभाव पड़ा था.

शुक्ला जी ने आगे कहा, "कहानी यहीं खत्म नहीं हुई है. उस दिन रात को जब मैं सोने जा रहा था, तब दिनेश ने दरवाजा खटखटाया. उसे देखकर मुझे आश्चर्य हुआ.

"मैंने पूछा, 'क्या बात है, दिनेश? इतनी रात को तुम यहां कैसे?'

"दिनेश का मुंह कुछ उतरा हुआ था. वह अटक-अटक कर कहने लगा, 'सर... सर... सर... आ... आज का आपका प्रयोग और मैं... मेरा चाकू!'

"मैं समझ गया कि आज की मेरी चर्चा का दिनेश पर अच्छा असर हुआ है. मन में मैं प्रसन्न था. मैंने उसकी पीठ पर हाथ रखा, 'ऐसे कोई रोता है? मैं जानता हूं कि तुम अच्छे लड़के हो.'

"रोते हुए दिनेश ने फिर कहा, 'नहीं सर, आप नहीं जानते. मैं अच्छा लड़का नहीं हूं. इस चाकू का उपयोग मैं अपने साथियों को डराने-धमकाने में किया करता था. मैं बहुत बुरा हूं.'

'मैंने उसे अपने पास बैंच पर बैठा लिया और कहा, 'देखो, दिनेश! अभी भी कुछ बिगड़ा नहीं है. तुम बुद्धिमान हो, बलवान हो. अच्छे विद्यार्थी बन सकते हो. आज से निश्चय कर लो कि इसी चाकू का उपयोग तुम हमेशा अच्छे कामों में करोगे.'

"इस पर जो अनपेक्षित घटना हुई उसके लिए मैं तैयार न था. दिनेश ने अपनी जेब से चाकू निकाला. उसे मेरे हाथ में देकर वह बोला, 'सर, यह चाकू आप ही रख लीजिए. आपके हाथों में हमेशा यह अच्छे कार्य करता रहेगा.'

"मैंने उसका चाकू रख लिया और इसी घटना के कारण यह चाकू मुझे बहुत प्रिय है. इस घटना ने दिनेश को एकदम बदल दिया. बुद्धिमान तो था ही. शीघ्र ही ऊंचे नंबरों से परीक्षा पास कर वह पुलिस लाइन में चला गया. आज वह एक बड़ा अफसर है." इतना कहकर शुक्ला जी ने विवेक की ओर देखा.

विवेक एकदम गंभीर हो गया था. उस चाकू की कहानी का उसके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा था. वह सोचने लगा, शुक्ला जी का व्यक्तित्व कितना महान है!

शुक्ला जी के चाकू की ओर देखते हुए वह रुआंसा होकर बोला, "अब मेरी समझ में आया कि आप इस चाकू को इतना क्यों चाहते थे!"

"इसी कारण मैं नहीं चाहता था कि तुम मुझे इस चाकू से मारो," शुक्ला जी ने कहा.

"आपने मुझ पर बहुत बड़ा उपकार किया है. आप देखेंगे कि यह गधा विवेक एकदम बदल जाएगा," विवेक ने कहा.

"शाबाश! तुम गधे नहीं हो. नकल करते-करते तुमने आत्मविश्वास खो दिया है. तुम मेहनत करके पास हो सकते हो. आज मैं बड़ा खुश हूं."

इतने में किसी ने दरवाजा खटखटाया और कहा, "शुक्ला जी, दरवाजा खोलिए, मैं हूं राठौर."

राठौर का नाम सुनते ही शुक्ला जी ने विवेक की ओर देखा. विवेक गंभीर था, शुक्ला जी ने धीरज देते हुए धीरे से कहा, "डरो मत, भरोसा रखो."

शुक्ला जी बाहर गए. उन्होंने दरवाजा खोला, सामने सिटी सुपरिंटेंडेंट राठौर खड़े थे.

"नमस्ते, सर!" राठौर ने कहा, "सब ठीक है न?" शुक्ला जी ने राठौर की ओर देखा, "नमस्ते! मैं समझा नहीं, तुम क्या कह रहे हो?"

"बात यह है कि सुबह उस गुंडे लड़के वाली घटना मेरे कानों में आई थी. मैंने सावधानी के तौर पर एक सी. आई. डी. को आपके घर की निगरानी पर रखा था. एक घंटे पहले उसने रिपोर्ट दी थी कि वह लड़का व उसके दो साथी आपके घर के पास घूम रहे हैं. इसी लिए मैं आया कि मौका पड़ा तो मैं बदमाशों को हिरासत में ले लूं."

विवेक को यह बात सुनकर काठ मार गया. अब उसके कान शुक्ला जी का उत्तर सुनने के लिए उत्सुक थे.

शुक्ला जी ने मुस्कराते हुए राठौर से कहा, "नहीं, दिनेश! जाओ. विवेक एक नादान छोकरा है. ईश्वर ने चाहा तो मैं उसको सुधार दूंगा. जाओ, मुझे कोई डर नहीं है. आदर और प्रेम के लिए मैं तुम्हारा बड़ा आभारी हूं."

अभिवादन कर राठौर चलने के लिए तैयार हुआ. जाते-जाते बोला, "आप जैसा शिक्षक पाने के लिए बड़े भाग्य की आवश्यकता होती है."

शुक्ला जी अंदर आए. विवेक की आंखों से अविरल अश्रुधारा बह रही थी. ●

राष्ट्रीय पुरस्कृत शिक्षक, व्याख्याता,
1126, नेपियर टाउन, जबलपुर. (म.प्र.)

कहानी

बारह बजने में कुछ मिनिट शेष थे. सोने से पहले किरण ने पम्पा को पत्र लिखा—

माई डीयर पम्पा,

एक पत्र आपको परसों लिखा था, एक आज लिखने बैठ गई, क्योंकि मैंने पहले पत्र में कैम्पस के वातावरण, स्टूडेंट-टीचर सबकी बहुत प्रशंसा की थी! वह झूठी प्रशंसा थी. सच पढ़कर आपको धक्का लगता, इसलिए झूठ लिखा. आज सच लिखती हूं, क्योंकि दूसरा चारा नहीं है.

पम्पा, यहां रैगिंग के कारण मेरा बुरा हाल है. फैक्टरी जाते समय कभी बस-स्टाप की तरफ देखा आपने? वहां तीन किस्म की भीड़ मिलेगी. बस स्टाप के ऐन सामने खड़ी भीड़, मुख्य भीड़ से बचने के लिए स्टाप से थोड़ा आगे खड़ी दूसरी भीड़, स्टाप से पीछे खड़ी तीसरी भीड़. दिल्ली में नया आदमी चौखला जाता है और तीनों भीड़ों में पिसता है. मेरी भी यहां तीन किस्म की रैगिंग होती है—क्लासफेलोज द्वारा, सीनियर लड़कों वाली और तीसरी होस्टल की लड़कियों वाली.

क्लास रूम में घुसती हूं तो ब्लैक बोर्ड पर लिखा मिलता है—राजेश लव्ज़ ब्राउन कैट! सोचती हूं, भगवान ने मुझे ब्राउन आंखें क्यों दीं?

सीनियर लड़कों का दिमाग तो हमारी फैक्टरी की असेंबली लाइन की तरह है. असेंबली लाइन हर पांच मिनिट बाद नई साइकिल निकालती

चौथी रैगिंग



है, सीनियर के दिमाग हर पांच सैकंड बाद रैगिंग का नया ढंग.

होस्टल में कहने को कुल पांच सीनियर लड़कियां हैं किंतु उनमें से प्रत्येक साक्षात दुर्गा का अवतार ही समझिए. मुझे तो अपना होस्टल भूत-बंगला लगता है. पचास कमरे, छह लड़कियां.

आज अपनी होस्टल वार्डन से मैंने एक लड़की की शिकायत भी कर दी. उन्होंने दिलासा दिया—यह तो पंद्रह दिनों का ज्वार है. उतर जाएगा. यदि मैंने रेखा को कुछ सजा दे दी, तो पांचों की पांचों लड़कियां हाथ धोकर तुम्हारे पीछे पड़ जाएंगी. पम्पा, जब तीसरे दिन यह दशा है, तो पंद्रह दिन कैसे कटेंगे?

जब दिल्ली इंजीनियरिंग कालिज में मुझे एडमिशन नहीं मिला था, तब आपने कितना ठीक कहा था कि मैं बी. एस-सी. ज्वाइन कर लूं. किंतु मुझपर तो इंजीनियर बनने का भूत सवार था. सोचती थी कि इंजीनियर बनकर

आपकी फैक्टरी संभाल लूंगी, ताकि आपको 'फील' न हो कि आज मेरा लड़का होता तो कितना अच्छा रहता. मेरा सपना अधूरा ही रहेगा, पप्पा! आप बिना एक सैकण्ड की भी देर किए 'मिरांडा हाउस' में मेरी एडमिशन करवा कर मुझे लेने आ जाइए. यहां तो रैगिंग का भय बाल से बंधी तलवार की तरह चौबीस घंटे सिर पर लटकता रहता है.

इस समय रात के सवा बारह बजे हैं और दरवाजे पर दस्तक पड़ रही है. होस्टल की सीनियर-मोस्ट लड़की, मुटियल रजनी होगी जो मुझे चाय लेने आधा किलोमीटर दूर मार्केट के रेस्टोरेंट तक भेजेगी. अब लिखना बंद करती हूं. दरवाजा खोलने में देरी होगी तो आर्डर के साथ सजा भी सुनानी पड़ेगी, जैसे सिक्के को नाक के सहारे दीवार पर चढ़ाना. इस क्रिया में मेरी नाक कई मिलीमीटर घिस चुकी है. पप्पा, मुझे तुरंत वापिस बुला लीजिए. मैं यहां नहीं रह सकती.

मम्मी को प्रणाम! उनकी पीठ का दर्द ठीक हो गया होगा. अब सचमुच ही लिखना बंद करती हूं, वरना दरवाजा टूटने में देर नहीं है.

—किरन

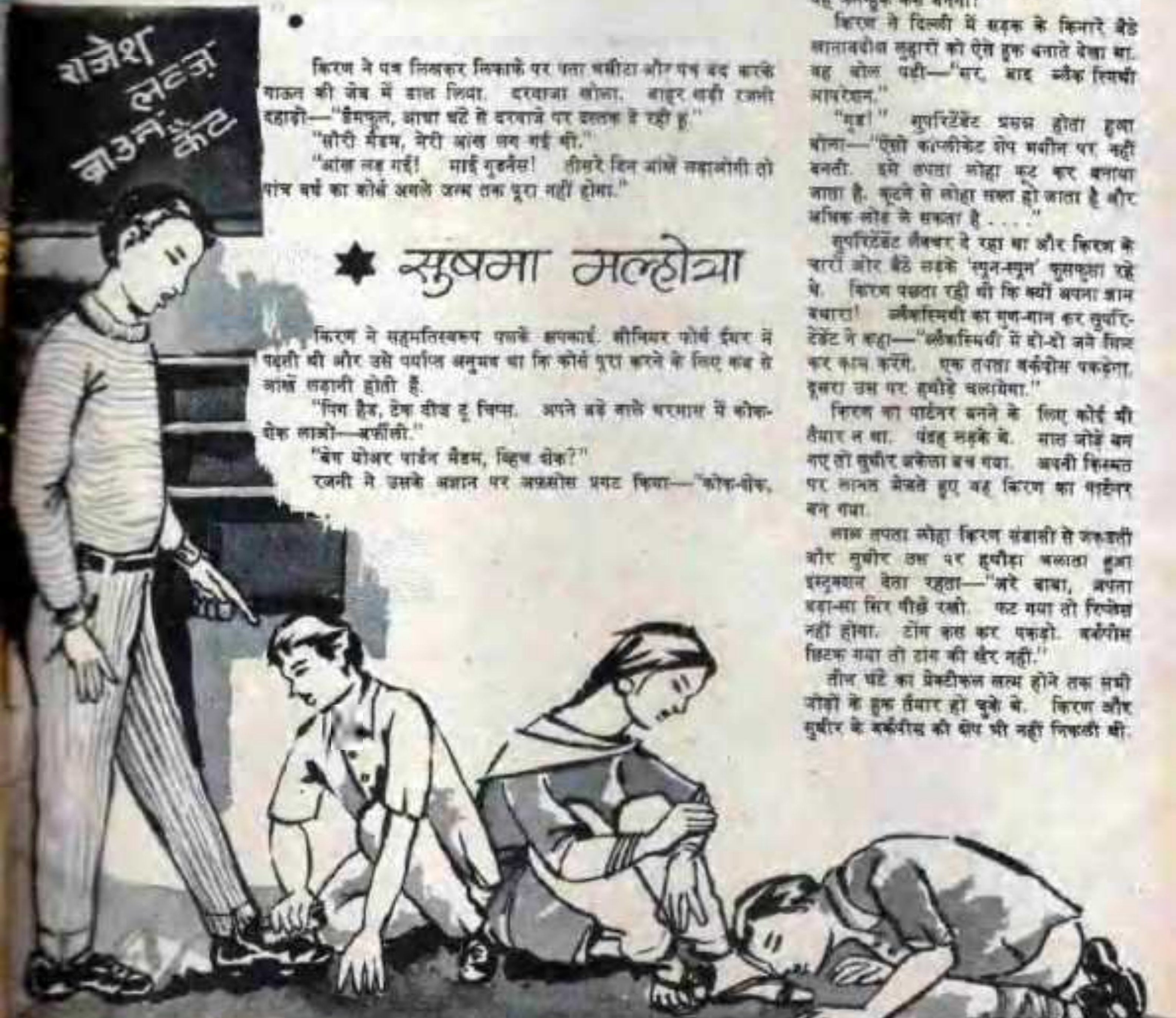
•

किरण ने पत्र लिखकर लिफाफे पर पता घसीटा और पत्र बंद करके गाउन की जेब में डाल लिया. दरवाजा खोला. बाहर खड़ी रजनी दहाड़ी—"डैमफूल, आधा घंटे से दरवाजे पर दस्तक दे रही हूं."

"सौरी मैडम, मेरी आंख लग गई थी."

"आंख लग गई! माई गुडनैस! तीसरे दिन आंखें लड़ाओगी तो पांच वर्ष का कोर्स अगले जन्म तक पूरा नहीं होगा."

✡ सुषमा मल्होत्रा



किरण ने सहमतिस्वरूप पलकें झपकाईं. सीनियर फोर्थ ईयर में पढ़ती थी और उसे पर्याप्त अनुभव था कि कोर्स पूरा करने के लिए कब से आंखें लड़ानी होती हैं.

"गिव हेड, टेक दीज टू चिप्स. अपने बड़े वाले थरमास में कोक-शेक लाओ—जल्दी."

"बेग योअर पार्डन मैडम, व्हिच शेक?"

रजनी ने उसके अज्ञान पर अफसोस प्रगट किया—"कोक-शेक, इडियट! ढाई सौ ग्राम मिल्क प्लस टू कोकस! जोड़ो! कालिज वाले जाने कहां कहां से चुनकर इडियट मंगाते हैं."

कैम्पस का मार्केट सुबह तीन बजे तक जगमगाता था. किरण कोक-शेक लेकर लौटी तो रजनी ने नोट्स कापी करने का काम सौंप दिया. दो बज कर दस मिनट पर मुक्ति मिली.

•

वर्कशाप सुपरिटेंडेंट ने दो लोहे के टुकड़े क्लास को दिखाते हुए पूछा—'कोई स्टूडेंट कॉमनसेंस से बता सकता है कि इस लोहे के सिलिंडर से यह फैन-हुक कैसे बनेगा?"

किरण ने दिल्ली में सड़क के किनारे बैठे खानाबदोश लुहारों को ऐसे हुक बनाते देखा था. वह बोल पड़ी—"सर, बाइ ब्लैक स्मिथी आपरेशन."

"गुड!" सुपरिटेंडेंट प्रसन्न होता हुआ बोला—"ऐसी काम्प्लीकेट शेप मशीन पर नहीं बनती. इसे तपता लोहा कूट कर बनाया जाता है. कूटने से लोहा सख्त हो जाता है और अधिक लोड ले सकता है . . . ."

सुपरिटेंडेंट लैक्चर दे रहा था और किरण के चारों ओर बैठे लड़के 'खुसर-फुसर' फुसफुसा रहे थे. किरण पछता रही थी कि क्यों अपना ज्ञान बघारा! ब्लैकस्मिथी का गुण-गान कर सुपरिटेंडेंट ने कहा—"ब्लैकस्मिथी में दो-दो जने मिल कर काम करेंगे. एक तपता वर्कपीस पकड़ेगा, दूसरा उस पर हथौड़े चलायेगा."

किरण का पार्टनर बनने के लिए कोई भी तैयार न था. पंद्रह लड़के थे. सात जोड़े बन गए तो सुधीर अकेला बच गया. अपनी किस्मत पर लानत भेजते हुए वह किरण का पार्टनर बन गया.

लाल तपता लोहा किरण संडासी से जकड़ती और सुधीर उस पर हथौड़ा चलाता हुआ इस्तुबयान देता रहता—"अरे बाबा, अपना बड़ा-सा सिर पीछे रखो. फट गया तो रिपेयर नहीं होगा. टोंग कस कर पकड़ो. वर्कपीस छिटक गया तो टांग की खैर नहीं."

तीन घंटे का प्रेक्टीकल खत्म होने तक सभी जोड़ों के हुक तैयार हो चुके थे. किरण और सुधीर के वर्कपीस की शेप भी नहीं निकली थी.

लगातार हथौड़े चलाकर सुधीर थक चुका था. महन निराशा में वह सुपरिंटेंडेंट के पास पहुंचा—"सर, इट इज इनजस्टिस टू मी!"

सुपरिटेंडेंट ने मुस्करा कर कहा—"डोंट वरी, नंबर मुझे ही लगाने हैं."

किरण होस्टल की ओर चली तो [illegible] निराश थी.

●

सड़क के किनारे दो सीनियर खड़े थे जो हरेक फैशर को रोक रहे थे. किरण गुजरी तो एक कड़का—"हाल्ट! अटेंशन!! फैशर?"

किरण अटेंशन खड़ी हो गई—"यस, सर!"

अगला प्रश्न दगा—"योअर ब्रांच?"

"इलेक्ट्रीकल इंजीनियरिंग, सर!"

"आज फैशरज के लिए फुटबाल ग्राउंड में एक स्पेशल क्लास होगी. जाओ, अटैंड करो."

फुटबाल ग्राउंड में पांच सीनियर फैशरज को ब्रांचवाइज बैठा रहे थे. किरण भी जमीन पर रूमाल बिछा कर इलेक्ट्रीकल इंजीनियरिंग की क्लास में बैठ गई. सीनियर अपनी-अपनी क्लास के आगे लैक्चर देने लगे. इलेक्ट्रीकल इंजीनियरिंग के 'प्रोफेसर' ने कहा—"लेडी एंड जण्टलमैन, आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमारे देश में हजारों इंजीनियर घास खोद रहे हैं, मक्खियां मार रहे हैं. फिर भी आपने यहां आने का कष्ट किया. बड़ी खुशी की बात है. गलती इंसान से होती है और आप सब इंसान हैं. किसी को एतराज?"

किसी को एतराज न था. प्रोफेसर ने आगे कहा—"हमारे डिपार्टमेंट के हेड ने आपसे कहा होगा कि देश में इलेक्ट्रीकल इंजीनियरज के प्रॉस्पेक्टस इतने ब्राइट हैं, जैसे फ्लड लाइट. वास्तव में हमारे प्रॉस्पेक्टस फ्लड लाइट जितने ब्राइट तो क्या, कैंडल लाइट जैसे भी नहीं हैं.

"लेडी एंड जेंटलमैन, डंके की चोट पर मुझ से सच्चाई सुन लीजिए कि देश में अच्छे-बुरे किसी भी किस्म के इंजीनियरों की जरूरत नहीं है. इसलिए सीनियर आपको बूटपालिश, झाड़-पोंछ, धुलाई की प्रेक्टीकल ट्रेनिंग देते हैं, ताकि आप किसी न किसी धंधे में तो तरक्की कर ही लें. हां, हमारे इलेक्ट्रीकल इंजीनियर होने का एक्स्ट्रा लाभ यह है कि नौकरी न मिलने पर हम एक थैले में चंद औजार डाल कर इलेक्ट्रीशियन बन सकते हैं."

लड़के अगाध श्रद्धा से सीनियर के श्रीमुख से झड़ रहे शब्द सुन रहे थे. उस समय टेक्सटाइल इंजीनियरिंग के 'प्रोफेसर' फरमा रहे थे—"टेक्सटाइल इंजीनियर होने का एक अतिरिक्त लाभ यह है कि यदि इंजीनियर बनने पर नौकरी न मिली तो हम घर में खड्डी लगा कर दरियां बुन सकते हैं. वी कैन हेव अवर ओन खड्डी. नो नॉनसेंस! पड़ोस में दूसरी क्लासें भी चल रही हैं."

इलेक्ट्रीकल इंजीनियरिंग का 'प्रोफेसर' चिल्लाया—"जो इडियट शोर करे, उसे मेरे पास भेज दो."

टेक्सटाइल के 'प्रोफेसर' ने सामने बैठे दो निरीह से दीखने वाले इडियट्स इधर रवाना कर दिए. पहले इडियट को आदेश मिला—"हमारे पादत्राण चमकाओ."

"पादत्राण, सर!"

"इडियट, यू डोंट नो अवर नेशनल लैंग्वेज. पादत्राण मीन्ज जूते."

"सर, पादत्राण चमकाने के यंत्र?"

सीनियर ने जेब से बूटपालिश और ब्रुश यूं निकाल कर पकड़ा दिया, जैसे बॉलर के मांगने ही अंपायर जेब से नई गेंद निकाल दे. पहला फैशर पादत्राण चमकाने में व्यस्त हो गया. दूसरे को आज्ञा मिली—"बिजली वाली देवी के चरणों में सात बार नाक रगड़ो."

बिजली वाली देवी! इलेक्ट्रीकल इंजीनियरिंग की किरण!

किरण सहम गई. फैशर, आज्ञा-पालन करने सीधा उसकी ओर बढ़ा आ रहा था. उसने गिनकर किरण की चप्पलों पर सात बार नाक रगड़ा. सीनियर ने जैसे याद दिलाया—"देवी जी, आशीर्वाद!"

किरण का हाथ नहीं उठा. अवज्ञा होती देखकर सीनियर तिलमिला कर उसके निकट आ गया—"स्टैंड अप!"

किरण खड़ी हो गई.

"योअर वैड नेम?"

"किरणबाला, सर!"

फैशरों का ठहाका!

"व्हिच स्कूल यू डिसग्रेस?"

"मेटर डायस कान्वेंट, न्यू दिल्ली, सर!"

दूसरा ठहाका!

"फाक आऊट!"

किरण क्लास से बाहर खड़ी हो गई.

सीनियर ने अपनी जेब से एक नन्हा-सा दर्पण निकाला और उसे किरण की ओर बढ़ाते हुए बोला—"इसमें अपना चंद्रमुख देखकर पांच मिनट अपना बखान करो."

किरण ने दर्पण नहीं पकड़ा. सीनियर ने क्लास को संबोधित करते हुए कहा—"जेंटलमैनो, बहुत शोर सुनते थे पहलू में दिल का. ऑपरेशन थियेटर में जाकर देखा तो . . . . तो याद नहीं आता क्या निकला. सुनते थे, नई दिल्ली में एजूकेशन स्टेंडर्ड बहुत ऊंचा है, किंतु वहां स्कूलों में इतनी कल्चर भी नहीं सिखाई जाती कि जूनियर को सीनियर का कहना मानना चाहिए. कल से जिस बैंच पर देवीजी बैठेंगी, उस पर कोई नहीं बैठेगा."

किरण जानती थी कि ये वेदवाक्य थे और उनका अक्षरशः पालन होने जा रहा था.

सीनियर आगे कह रहा था—"पहली लाइन का तीसरा इडियट. यदि मैं गलती नहीं करता हूं तो यू आर ए शायर!"

फैशर ने सिर हिला कर सहमति जताई. सीनियर ने उसे आज्ञा दी—"तुम मेरा लैक्चर खत्म होने पर किरणबाला पर गीत सुनाओगे."

किरण की आंखों में आंसू चमक रहे थे. सीनियर ने उसकी ओर देखकर अगला अध्यादेश जारी किया—"व्हाट ए लवली सीनिन! हाऊ स्वीट टीयरज! फैशरज, कैम्पस की पवित्र ज्ञान-भूमि पर देवी के जितने आंसू गिरेंगे, उससे दस गुना आंसू प्रत्येक फैशर बहाएगा."

किरण ने पर्स में से रूमाल निकाल कर तुरंत आंसू पोंछ डाले. इस समय आंसू बहने देना नया संकट मोल लेना था.

सीनियर ने लैक्चर जारी रखा. उसने फैशरों को जूते चमकाने की असमर्थता पर खेद प्रकट किया. इस क्षेत्र के प्रति सरकार के उदासीन रवैये को गलत बताया. राजधानी में कनॉट प्लेस और चांदनी चौक के जूता चमकाने वाले छोकरों के कारण हुई टेक्नीकल प्रगति को संतोषजनक कहते हुए जूते चमकाने की लेटेस्ट विधियों का वर्णन किया.

लैक्चर के दौरान पंद्रह लड़कों को लैक्चर ध्यान से सुनने के अपराध में तरह-तरह की सजा दी गई. लैक्चर के अंत में शायर फैशर ने अपना कारनामा सुनाया—"रेस्पेक्टेड प्रोफेसरज एंड फैंड्ज, मैंने मिस किरणबाला पर जो पैरोडी तैयार की है, वह फिल्म 'श्री 420' के गीत 'दिल का हाल सुने दिल वाला' पर बनी है तो अर्ज किया है—

किरणबाला, गर्म मसाला,
कूट-कूट कर सब्जी में डाला.
सोचा हमने मीठी होगी,
निकली मीर्चीजान की खाला.
किरण बाला . . . ."

इस पैरोडी को सुनकर सिवाय किरण के सभी लड़के- हंसते-हंसते दोहरे हो गए. पैरोडी के पश्चात् क्लास खत्म हुई.

●

धीमी चलती किरण पीछे छूट गई थी. सहसा उसने अपने कान के निकट ही एक स्वर सुना—"मिस किरण!"

किरण चौंक कर घूमी. वही फैशर था, जिसने उसके चरणों में नाक रगड़ी थी. फैशर ने थोड़ा संकोचवश भूमिका के तौर पर कहा—"सॉरी! मेरे कारण आपकी इंसल्ट हुई."

किरण जबरन हंसी—"नेवर माइंड! आपका इसमें क्या दोष है?"

"हम फैशरों की भी मुसीबत है. आपकी रैगिंग तो कॉलिज में ही होती है. हमारे सिर पर तो चौबीसों घंटे सीनियर यमदूतों की तरह सवार रहते हैं—क्या कॉलिज, क्या होस्टल!"

किरण ने जोरों से प्रतिवाद किया—"आपके

होस्टल में पचासों फैशर होंगे. इसलिए रैगिंग कमेटी बंट जाती होगी. गर्ल्ज होस्टल में तो मैं अकेली फैशर हूं. पांचों सीनियरज़ का गुस्सा मेरे ऊपर ही गिरता है."

"ऐसा!"

"हां!"

"मेरा नाम राकेश पांडे है. टेक्सटाइल इंजीनियरिंग, नालंदा होस्टल!"

गर्ल्ज होस्टल निकट आ गया था, इसलिए राकेश ने जल्दी जल्दी अपना परिचय देकर विदा ली. किरण को पहली बार अपने कुछ मिनट सार्थक हुए लगे थे. बेचारा राकेश पांडे! वह करता भी क्या! सच, इन दिनों में फैशर होना भी एक गुनाह है.

●

जौकस्मिथी के कारण शारीरिक थकावट, दूसरे मानसिक उदासी और निराशा. किरण का इरादा एकाध घंटा सोने का था. किंतु होस्टल में कदम रखते ही कॉमनरूम से पुकार हुई. पांचों दुर्गाएं कॉमनरूम के सोफों पर पसरी पड़ी थीं. सीमा ने पूछा—"इतनी देर कैसे हो गई?"

किरण ने पूरी घटना सुना दी. शशि ने बेवकूफीनुमा डपट लगाई—"हैमफूल ये सीनियर लड़के आइसबर्ग की तरह हैं—दसवां हिस्सा पानी के ऊपर, नौ हिस्से पानी में गुल! यह सारा आपरेशन तुझे फंसाने के लिए किया गया होगा. वह राकेश पांडे कोई सीनियर होगा. उसने तुझ से फ्रेंडशिप करने के चक्कर में अच्छी रैगिंग करवाई होगी. यू आर ए फूल ऑफ आर्डर वन. नर्सरी किड!"

किरण सन्न! ऐसा जाल! क्यों न टिकट कटा कर स्वयं ही दिल्ली पहुंच जाए. चार सौ पचासी किलोमीटर की दूरी है—एक रात का सफर! एकाएक उसके कान चौकन्ने हो उठे. उसने एक दुर्गा के श्रीमुख से झड़े पुष्प पहुंच रहे थे—"आज हमारा कैबरे देखने का मूड है, री!"

किरण ने दीनता से कहा—"मैडम, मुझे कैबरे करना नहीं आता."

रजनी ने कूल्हे मटकाते हुए एक्सप्लेन किया—"कैबरे में क्या रखा है? कूल्हे मटकाते हुए एक-एक करके सारे कपड़े उतार कर फेंकने होते हैं. हां, ऐज़ ए स्पेशल केस हम तुम्हें नीचे के दो वस्त्र एलाऊ कर देंगी."

दुर्गा नंबर दू दहाड़ी—"नो ओनली वन!"

दुर्गा नंबर तीन ने घोषणा की—"नॉट इवन वन. ज़ीरो."

सर्वसम्मति से प्रस्ताव पास हो गया कि कैबरे का कपड़ों से क्या नाता! इसी बीच किरण ने मन ही मन हिसाब लगाया. कल उसका पत्र दिल्ली पहुंचेगा. परसों किसी भी समय पप्पा आ जाएंगे. बस, एक दिन की शामत शेष है. बोली—"मैडम, आप जैसे कहेंगी, मैं करती जाऊंगी. वैसे मुझे कैबरे नहीं आता."

पांचों सीनियरज़ की आंखें फट गईं. रजनी ने लज्जित होकर कहा—"तुम सारे कपड़े उतार दोगी. बेशर्म कहीं की!"

सीमा दहाड़ी—"होस्टल को क्या समझ रखा है! बाथरूम!"

मनीषा निराशा में बोली—"इसी ने बोर कर दिया."

शशि सहमत थी—"एवरीथिंग गुड़-गोबर!"

रेखा ने किरण को डपटा—"जौकस्मिथी में मुंह काला करने गई थी. नहा-धोकर गेट रेडी विदिन फाइव मिनटस! वार्डन छुट्टी पर है और हम पिक्चर देखने जा रही हैं. फिर न कहना कि साथ नहीं लिया."

किरण के फरिश्ते भी न समझ सके कि यह कायापलट कैसे हो गई! कहां कैबरे? कहां पिक्चर!

किरण बाथरूम में थी, तब सीनियरज़ की बातें सुनकर रहस्य खुला. सीनियरज़ सोचती थी कि किरण कैबरे के लिए हर्गिज हर्गिज तैयार न होगी और उसकी एवज में पिक्चर दिखाने को तैयार हो जाएगी. किरण ने कैबरे के लिए सहमत होकर पासा पलट दिया था.

●

छहों सजी-धजी लड़कियां सिनेमा हॉल पर जा पहुंचीं. नई पिक्चर थी. खासा रश था. बुकिंग क्लर्क ने अंतिम चार टिकटें सीमा को देकर 'हाऊस फुल' की तख्ती टांग दी.

दो टिकटों का प्रबंध कहां से हो! किरण कहने जा रही थी कि मैं वापिस चली जाती हूं. तभी सीमा ने सुझाया—"आपरेशन पिलपिला!"

चारों सीनियरज़ ने एक स्वर में कहा—"यस, आपरेशन पिलपिला!"

किरण ने धीमे से रेखा से पूछा—"आपरेशन पिलपिला क्या?"

"तेरी पापी खोपड़ी नहीं समझेगी. यह हमारा कोड वर्ड है. यदि कोई छोकरा ब्लैक में टिकट बेचने आया है, तो किसी सजी-धजी लड़की के मांगने पर आधे दाम में ही देकर चलता बनेगा. हम लड़कियों के यही तो मजे हैं. थोड़ा बोल्ड बन कर हम कोई भी परेशानी चुटकी में मसल सकती हैं. सीमा को देख."

सीमा ने दो-तीन लड़कों के पास जाकर पूछा—"मिस्टर, एनी स्पेयर टिकट प्लीज़?"

चुटकी बजाते दो स्पेयर टिकट मिल गए. हॉल के अंदर 'आपरेशन पिलपिला' चला कर दो लड़कों से सीटें बदली गईं. छहों लड़कियां इकट्ठी हो गईं.

किरण चकित थी. कितने मजे में छोटी-मोटी परेशानियां दूर हो गईं. किरण ने शशि से पूछा—"मैडम, मशीन डिजायन किस ईयर में पढ़ाया जाता है?"

"फोर्थ ईयर, मैकेनिकल, क्यों?"

"राकेश पांडे के हाथ में मशीन डिज़ाइन की बुक थी. कुछ समझीं, मैडम!"

"समझ गई!"

पिक्चर बोर नहीं थी, इसलिए बातचीत का क्रम वहीं टूट गया. सारा खर्च सीमा ने किया था. होस्टल में आकर खर्च पांच हिस्सों में बांटा गया. किरण ने कहा—"इफ यू डोंट माइंड, यह बिल मुझे देने दीजिए."

सीमा ने झिड़का—"शट अप! बनती है पैसे वाली. जानती हूं तेरे डैडी ने साइकिलें बेच बेच कर बहुत ब्लैक-मनी इकट्ठी कर ली है."

"ब्लैक नहीं मैडम, व्हाइट!"

"ओ.के. व्हाइट ही सही. आगे से मुझे मैडम कहा तो उठा कर सड़क पर फेंक दूंगी."

"दीदी चलेगा?"

"नॉनसेंस! मैं तेरी दीदी कैसे हो गई! क्या तेरे मुंह से मेरा नाम नहीं फूटता? मेरा

(शेष पृष्ठ 45 पर)

प्रति मास नए पुरस्कार

चूंकि मार्च 1972 अंक से 'हमारी पसंद प्रतियोगिता' बंद कर दी गई है, अतएव इस अंक की कहानियों के बारे में पाठक अपनी पसंद के विषय में कार्ड भेजने का कष्ट न करें.

प्रतियोगिता नं० 59 (जनवरी, 1972) का परिणाम

इस प्रतियोगिता में चार पाठकों के सर्वशुद्ध हल प्राप्त हुए. उनके नाम नीचे दिए जा रहे हैं. शीघ्र ही उन्हें पुरस्कार भेजे जाएंगे.

●विविक्रम एस. सोनी, द्वारा एस. एस. सोनी, 136 पोलन पेठ, जलगांव (महाराष्ट्र); ●राधेश्याम साहू, द्वारा श्री नन्हेलाल साहू, सुभाष वार्ड, म. नं. 1, गाडरवारा, (म.प्र.); ●महेशकुमार, मौ. छेदालाल गौड़, पो. अलीगंज, एटा (उ.प्र.); ● वीरेंद्रकुमार चौहरी, म. नं. 356, गिरधर का चौराहा, मिरजापुर (उ.प्र.).

जनवरी 1972 (प्रतियोगिता नं. 59) की प्रथम स्थान पर चुनी गई कहानियों का मतसंख्यानुसार क्रम इस प्रकार है.

1—लाल मिर्च, 2—दुनिया इसी का नाम है, 3—बकरी का बच्चा, 4—पत्र मित्र, 5—प्रथम पुरस्कार, 6—चवन्नी का आविष्कार.

हमें प्रसन्नता है कि इस बार प्रथम चुनी गई कहानी 'लाल मिर्च' की लेखिका मल्लिका को इस प्रतियोगिता क्रम में पचास रुपये का अतिरिक्त श्रेष्ठता पुरस्कार दिया जा रहा है. लेखिका को बधाई.



पुराणमल नवकुमार
शेहाब
यह महफिल, यह दुनिया, तेरे काम की नहीं... तेरे काम की नहीं
कमाल है, नवकुमार क्या अच्छा गा रहा है!
क्या बात है, भई? किस खुशी में इतना अच्छा गा रहे हो?
हाय! मैं लुट गया!
क्यों, क्या हुआ?
आज किसी ने मेरी जेब साफ कर दी!
मगर इस बात पर तो तुमको गम करना चाहिए न कि गाना चाहिए!
पुराणमलजी, तुम को समझ नहीं है. अपनी फिल्मों में तुम देखते नहीं कि लोग गम में भी गाते हैं!
तो क्या तुम कोई फिल्मी हीरो हो?
अरे मैं उनका बाप हूं. लोग कहते हैं अगर मैं जरा बनाव-सिंगार कर लूं, तो क्या बात है!
यह तो है! नर नारी सभी दिल थाम लेंगे!
गुड़!
पुराणमल के व्यंग को नवकुमार नहीं समझा. अपने विचारों में मगन जब वह सोया तो सुंदर सपने में खोया...
अपने आप को बिलकुल बदला हुआ पाया
वह घूमने-फिरने निकला तो एक जगह बड़ा मजमा लगा था, पता चला दिलीप-कुमार और सायरा आनो आए हैं...
अरे, अरे, नवकुमार, तुम दीवाने की तरह मजमे में क्यों घुस रहे हो!
ओ, तुम जाओ!
दिलीप-सायरा को छोड़ो पहले इसे देखो!


दिलीप और सायरा जैसे ही स्टोर से बाहर आए, सायरा नवकुमार को देख कर चौंकी...
दिलीप साहब, आह! मेरी निगाहों ने उसे पा लिया जिसकी एक जमाने से मुझे तलाश थी!
यह क्या बेहूदगी है, सायरा, तुम लगातार उधर ही क्या देखने जा रही हो?
और फिर वह लपक कर नवकुमार के पास आ गई!
ठहरो, मैं खून बहा दूंगा!
खबरदार, दिलीपकुमार! आज तुम प्रेम की यह बाजी भी हार चुके हो! सच्चाई को मान लो और मुझ से उलझ कर मौत को दावत मत दो!
अरे, अरे! दिलीप साहब! नहीं, नहीं, आप गोली नहीं चला सकते!
कमाल है, सायरा, मुझे कितना चाहती है!
हट जाओ, सायरा, तुमने पिक्चर हॉल में मेरा अपमान किया है!
क्षमा कीजिए, सरताज, आपको गलतफहमी हुई! मैं तो इसका बनाव-सिंगार देख कर अपनी सहेली समझी थी!
हा, हा, हा!
हाय!
सपना टूट चुका था, वह पलंग से नीचे गिरा और...
यार, तुम ऊंचाई से गिरे, चोट लगी, किंतु फिर गाने लगे?
किंतु इस बार मैं प्रार्थना कर रहा हूं और भजन गा रहा हूं।
क्यों?
ताकि भगवान दुनिया से उठा ले!

नगर नगर में घूमता आईना—

भारतीय किशोर

ग्वालियर पूरी तौर पर शहर नहीं कहा जा सकता. हां, छोटा शहर इसे जरूर माना जा सकता है. अजीब मौसम है यहां का—यों भी कहा जा सकता है कि यहां मौसम दो ही हैं—सर्दी और गर्मी. दोनों अपनी-अपनी कालावधि में चरम सीमा पर होते हैं. वातावरण की दृष्टि से अजीब ढंग है. चारों ओर से पहाड़ियों से घिरा हुआ और बीच में कुछ अंदर की ओर धंसा हुआ. मिलिट्री के लोग कहते हैं—ब्लैक आउट रहे तो हवाई जहाज से इस शहर का पता मुश्किलों से चल सकता है. सिंधिया का राज यहां खूब जमा रहा—अभी भी सामंतवादी माहौल बखूबी जमा हुआ है. भाषा यहां की ग्वालियरी है. प्रसिद्ध डाकुओं का प्रदेश आस-पास है—कुछ इसी वजह से कह लीजिए युवकों में अजीब दादागिरी का रौब है. पर छोटा शहर ऐसा है कि यहां शिक्षा की हर सुविधा मौजूद है. इंजिनियरिंग कॉलिज है, मेडिकल कॉलिज है, फिजिकल कॉलिज है, एग्रिकल्चर कॉलिज है, म्यूजिक कॉलिज है, आयुर्वेदिक कॉलिज है, आर्ट कॉलिज है—और सारे देश का एन.सी.सी. कॉलिज फॉर विमन यहां है. मतलब कि हर तरह की शिक्षा यहां ग्रहण की जा सकती है.

●

ग्वालियर के किशोर और किशोरियों के सामने अलग-अलग विषयों पर चंद सवाल मैं रख देता हूं और वे अपने मन की बातें सहज ही बतानी शुरू कर देते हैं.

बंगला देश से आए शरणार्थियों के हर पहलू पर वे सोचते रहे हैं और जब मैंने नीतिन जोगलेकर से सवाल किया, तब वे गर्दन हिला-हिलाकर बोले—"राजनीतिक दृष्टि से भले ही वह देश अलग हो, पर सन् 71 में उसका असली चेहरा सामने आ गया. बर्बर लोगों ने उन पर अत्याचार किए. उन का शोषण किया गया और तभी बेसहारा शरणार्थियों की भीड़ की भीड़ भारत आ गई. यों कह सकते हैं कि वे मजबूर थे. हमें हर संभव सहायता करनी ही थी. अब जरूर बंगला देश आजाद हो गया है. अब शरणार्थियों को लौटना होगा. वे लौट भी रहे हैं. कुछ दिनों तक जरूर हमारे देश को उन्हें मदद देनी होगी. मेरा तो ख्याल है कि दो ऐसे मामले हैं—रक्षा और विदेश नीति, जहां हमें एक होकर निर्णय लेना चाहिए."

नीलम देशपांडे का ख्याल है कि राष्ट्रीय स्तर पर विरोध हो सकता है, पर मानवीयता भी अपनी जगह पर है और इसी आधार पर हमें उनकी मदद करनी लाजमी थी. देश के व्यवहार जरूर अनप्रेडिक्टेबल हैं, पर शरणार्थी तो बेघर-बार थे.

अंजली पालनीस मानती हैं कि हम शुरू से ही मानवतावादी रहे हैं और इस तरह हमारा पहला कर्तव्य हो जाता है शरणार्थियों की मदद करना. फिर भले ही हमें त्याग ही क्यों न करना पड़े और यह सब हमने कर दिखाया है. कादंबनी केलकर और लोकेश शर्मा भी प्राय: इन्हीं ख्यालात के हैं.

●

आज की शिक्षा-व्यवस्था के प्रति इन किशोर-किशोरियों का सख्त विरोध है.

चंद्रा बुंदेला इंग्लिश लिटरेचर में एम. ए. कर रही हैं, पर उनकी रुचि म्यूजिक में है. सितार बड़ा ही मीठा बजाती हैं. मैं तो म्यूजिक में रिसर्च करना चाहती हूं. मेरे घर पर संगीत की परंपरा है और शुरू से ही मेरा संगीत के प्रति लगाव रहा है. वास्तव में रुचियों पर ध्यान देकर ही अभिभावकों को शिक्षा के क्षेत्र में बच्चों को डालना चाहिए.

अपने भविष्य के बारे में पूछे जाने पर अजयसिंह बोले—बनना तो चाहता हूं डॉक्टर, पर नहीं बन पाया तो कृषि में रिसर्च करने का इरादा है. उधर काफी स्कोप भी है. नीतिन जोगलेकर इंजिनियर बनना चाहते हैं. पूछने पर कि यदि एडमिशन न मिल पाया, तो बोले—नहीं कैसे मिल पाएगा. मैं तो मेरिट के बल पर एडमिशन लूंगा. तैयारी जो कर रहा हूं. इंजिनियर बनकर सरकारी नौकरी नहीं करूंगा. कारण सरकारी नौकरी में मेहनत का पूरा-पूरा फल नहीं मिल पाता.



नीतिन जोगलेकर



नीलम देशपांडे



अंजली पालनीस



कादम्बिनी केलकर



लोकेशकुमार

नीलम देशपांडे से भविष्य के बारे में पूछा तो बोली—"मैं तो इंडस्ट्रियल केमेस्ट्री में काम चाहती हूं. आर मीन जब उस हद तक पढ़ लिख लूंगी. लोकेशकुमार से सवाल करने पर वह अनिश्चय की स्थिति में नजर आए. अभी वे तय ही नहीं कर पाए हैं कि वे क्या बनना चाहते हैं. हायरसेकेंड्री स्तर तक के किशोर अधिकतर डॉक्टर या इंजिनियर बनना चाहते हैं. कुछ पर पालकों का दबाव है, कुछ अपनी स्थिति के प्रति सजग हैं. हां, जो आर्ट्स विषय लिए बैठे हैं, वे बिल्कुल आशंका से लदे हुए हैं. कुछ ऐसे हैं जो बिजनेस कनसर्न में जाना चाहते हैं. अनिलकुमार भाटिया कामर्स का अध्ययन कर रहे हैं और अपने ही बिजनेस को बढ़ाना चाहते हैं. चार्टर्ड एकाउंटेंट बनने का इरादा रखते हैं. आर्ट्स के सभी छात्र मानते हैं कि आज की शिक्षा कोई व्यावहारिक ज्ञान नहीं दे पाती और इसीलिए भविष्य में सिवा पछतावा

आकलनकर्ता : डा० विजय बापट

जीवन - एक आकलन



पिछले अंकों में 'बंबई' और 'दिल्ली' के किशोरों की आंतरिक, वैचारिक, मानसिक और भौतिक तस्वीरें इस स्तंभ के अंतर्गत प्रस्तुत की गईं. पाठकों ने मध्यप्रदेश के प्रमुख-नगरों 'भोपाल' व 'इंदौर' के किशोर जीवन का आकलन आपने पढ़ा. और अब प्रस्तुत है मध्यप्रदेश की ही ऐतिहासिक नगरी 'ग्वालियर' के किशोरों का आकलन.

आकलनकर्ताओं से आग्रह है कि वे अपना लेख भेजते समय उन किशोरों के फोटो अवश्य भेजें, जिन्हें 'इंटरव्यू' में शामिल किया गया है. इस स्तंभ के अंतर्गत हर नगर के लेख आमंत्रित हैं. इसके लिए किसी विशेष अनुमति की आवश्यकता नहीं है.

—संपादक

करने के कुछ रह नहीं जाता.

●

फिल्म देखना हर किशोर पसंद करता है. नीलम देशपांडे ने अभी अभी 'गुड्डी' फिल्म


मंजरा बुंदेला


अजय सिंह


अनिलकुमार भाटिया


कुंकुम बंसल


मनमाला शर्मा

देखी है. नीलम सभी फिल्में देखती है, जब उस फिल्म की समीक्षा पढ़ लेती है. जब मैंने पूछा कि आपकी निगाह में समांतर फिल्म और व्यावसायिक फिल्म में अंतर क्या हो सकता है? नीलम मुस्कराकर बोली—"साफ बात तो यह है कि प्रायोगिक फिल्म जिंदगी के करीब वाली लगती है. आइ मीन, लगता है जैसे सब कुछ हमारी जिंदगी को ही दिखाया जा रहा है. दीगर फिल्म्स तो बस फेरी टेल्स जैसी होती है. निहायत काल्पनिक ढर्रे वाली, एकदम फार्मूला टाइप—"

यही सवाल जब मैंने जोगलेकर से पूछा तो वे बड़ी सधी भाषा में बोले—"व्यापारिक फिल्में तो बड़ी रद्दी होती है. उनका एक ही 'टाइप' होता है, जैसे खाका पहले से ही तैयार रहता है. बस, उसमें फिल्म फिट कर दी जाती है. हां, प्रायोगिक फिल्में जरूर हमारी जिंदगी से सटी रहती है. पर हमारे देश में अभी इसका सिलसिला चला ही कम है."

कुमकुम बंसल ने अपनी राय यूं जाहिर की—"इधर तो सभी व्यापारिक फिल्में जनता की रुचि पर बन रही हैं. मेरा मतलब है, जिनमें कैबरे नाच-गाने होते है. उसमें जैसे भीड़ घुमती है. तड़क-भड़क से अलग प्रायोगिक फिल्में है, जैसे 'खामोशी', 'भुवनशोम', 'सारा आकाश', इस तरह की फिल्में है कि लगता है हमारे ही परिवार की फिल्में हों."

अंजली पागनीस मानती है कि फिल्मों में परिवर्तन आना बेहद जरूरी है. लोकेश शर्मा मार-धाड़ फिल्म देखने में रुचि रखते है. कहते है, "मारकाट से भरी फिल्में मुझे बेहद पसंद है. अपना तो बस मनोरंजन होना चाहिए शिक्षा या उपदेश की कोई जरूरत नहीं."

इन किशोरों में धाकड़ फिल्म के प्रति सीरियस दृष्टि बढ़ती जा रही है. नीलम देशपांडे तो पहले यह भी देख लेती है कि फिल्म का निर्देशक कौन है? संगीत किसने दिया है? नीतिन जोगलेकर पाश्चात्य संगीत में अधिक रुचि रखते है.

●

फैशन के मामले में राय लगभग एक जैसी है. फैशन तो सभी करते है, पर विचार बड़े सधे हुए प्रतीत हुए :

जब नीलम देशपांडे से फैशन के बारे में सवाल किया तो बड़े संयत ढंग से बोली—"फैशन कोई हाय-तौबा वाली चीज नहीं है. फैशन तो हर जमाने में रहा है. आइ मीन, बड़ा स्वाभाविक है. हर नई चीज कुछ दिनों बाद पुराने ढर्रे की हो जाती है. फैशन के मामले में भी यही बात है हां, असली बात यह है कि किसपर क्या जंचता है, इसे जरूर देख लिया जाए. आइ मीन, जो सूट करता हो. अफलातून बनने में क्या रखा है. व्यक्ति की विकास प्रक्रिया में फैशन का महत्व है और हमें जमाने के साथ-साथ चलना चाहिए."

अंजली पागनीस मानती है कि फैशन करने से पहले अपने आप को पूरी तौर पर देख लेना चाहिए. इस तरह नहीं कि लोगों की निगाह में मजाक बना जाए.

नीतिन जोगलेकर मानते है कि यही वक्त है, जब हम फैशन कर सकते है. बाद में तो जिंदगी के तमाम झंझट होंगे और आपाधापी में मनपसंद कुछ पहन ही न सकेंगे. और फिर तो उम्र भी न रह



ठीक समय पर सही काम...
अच्छा?
क्यों,
क्या हुआ बेटे?
अच्छा, पिताजी!
अब रोज़ सवेरे और रात को 'फ़ोरहॅन्स' टूथपेस्ट से अपने दाँतों को ब्रश करना भूलना मत।
FOR THE GUMS
फ़ोरहॅन्स
—दाँतों के एक डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट।

49 F-203 HIN

आदमी. हां, फैशन के मामले में अपने व्यक्तित्व का ध्यान रखना लाजमी है. कुंकुम बंसल इस मामले में मध्यम मार्ग की हिमायती है. "न दकियानूसी वस्त्र न अफलातूनी पहनावा. लोगों को हैरत में डालने के लिए तो पहनावा है नहीं." लोकेश शर्मा मानते हैं, "स्मार्ट दीखने के लिए फैशन जरूरी है. यहां ग्वालियर में तो कुछ भी नहीं है. जरा कोई लड़की लुंगी पहन ले तो तमाम आंखें बाहर आ जाती हैं. जरा हमारी दिल्ली में आइए तो देखिए."

फैशन के मामले में ग्वालियर अभी बहुत आगे बढ़ा हुआ नहीं है. लोकेश शर्मा वाकई बात ठीक कहते हैं. हां, किशोरियों में बॉबकट की रुचि तेजी से बढ़ रही है. 'बेल बॉटम' भी है. पर अभी इक्का-दुक्का ही.

ग्वालियर नगर सभी किशोरों को पसंद है. वजह यही कि सभी यहीं के रहने वाले हैं. हां, जो बाहर से आए हैं, उन्हें यह नगर खास पसंद नहीं है. लोकेश शर्मा कहते हैं, "एकदम बेकार है ग्वालियर. न अच्छे होटल हैं न अच्छे दोस्त. दिल्ली में तो गर्ल-फ्रेंड्स भी थीं. यहां तो बस एकदम रूखा-सूखा!" दीगर सभी को ग्वालियर पसंद है. कादम्बनी केलकर की निगाह में ग्वालियर सस्ता भी है कम खर्चीला भी. शिक्षा की हर सुविधा है. बड़े शहरों की आपा-धापी नहीं.

जब मैंने कुंकुम बंसल से ग्वालियर के बारे में जानना चाहा तो बोलीं, "वैसे तो ठीक है, पर यहां के लोगों की भाषा बड़ी ठस है. उसमें मधुरता नहीं. कुछ पूछिए तो बस लठमार जवाब."

चंद सवाल मैं दीगर विषयों से संबंधित भी पूछता हूं, खासकर उन किशोरों से जो बी. ए. या एम.ए. में पढ़ते हैं. आज के छात्र वर्ग के असंतोष और आक्रोश का क्या कारण हो सकता है?

चंद्रा बुंदेला कमलाराजा कन्या महाविद्यालय के विद्यार्थी परिषद की प्रेसिडेंट है. जब मैंने यही सवाल उनसे कर दिया तो निहायत नफीस ढंग से बोलीं, "आज का छात्र भविष्य के अंधकार के कारण असंतुष्ट रहता है. वह सामने देखता है कि पढ़-लिखकर भी नौकरियां नहीं मिलतीं."

कुंकुम बंसल बी. ए. की छात्रा है, कहती है, "आज छात्र वर्ग के आगे कोई आदर्श नहीं रह गया है. आज के तथाकथित नेतागण कोई आदर्श हमारे सामने नहीं रख पा रहे हैं. पर चाहते हैं कि छात्र आदर्श बना रहे. बताइए कैसे संभव है? और फिर असंतोष हमारे यहां के ही छात्रों में नहीं है. विदेशों की भी यही हालत है. भले ही वहां असंतोष अति-भौतिकता के विरोध में हो."

कादम्बनी केलकर मानती है—"एक कारण परिवार की अस्थिरता भी है. परिवार के लोग कुछ आदर्श नहीं रख पा रहे. और इसके लिए कुछ हद तक समाज और परिस्थितियां दोषी हैं."

अनिलकुमार भाटिया बी. काम. के छात्र हैं. धीमी आवाज में बोले, "सारा दोष शासन का है. नौकरियां देना सरकार का काम है. हां, मैं यह भी मानता हूं कि आज का छात्र पढ़ाई के प्रति सीरियस नहीं है. इसका कारण यह भी हो सकता है कि वह भविष्य के प्रति बहुत आश्वस्त नहीं है. नौकरियों में डिग्रियां ही काम में नहीं आतीं, और भी कुछ जरूरी है. . ."

वनमाला शर्मा जो खुद सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य की पुत्री है, बोली, "छात्र-वर्ग की खुद अपनी भी समस्याएं होती हैं, जिनपर ध्यान नहीं दिया जाता."

मैंने जानना चाहा, "आज के छात्र में कर्तव्यों के प्रति अरुचि क्यों है? राष्ट्रीयता की भावना संकट की स्थिति को छोड़कर क्यों गुम-सुम है?"

कुंकुम बंसल तपाक से बोली—"वजह बताए देती हूं, सारे देश में धर्म, भाषा, जाति, संप्रदाय के मामले में संकीर्णताओं का इतना गहरा प्रभाव रहा है कि हर मंच से वही संकीर्णता असली रूप में झलक जाती है. हर पार्टी आज दूसरी की आलोचना करती है, पर मौका आने पर करती वही है, जिसकी आलोचना करती थी. इस स्थिति से छात्र खीजता है."

अनिलकुमार भाटिया ने गंभीर होकर कहा—"छात्र वर्ग आज मजबूरियों का शिकार है. हां, सिर्फ तोड़-फोड़ से कुछ नहीं होगा, आगजनी से कुछ नहीं होगा. जब तक भीड़ की मनोवृत्ति से अलग हटकर रचनात्मक कार्य नहीं किया जाता, तब तक कुछ नहीं होगा." चंद्रा बुंदेला मानती है—"तोड़-फोड़ से हमारा नुकसान होता है, इसे हम समझते हैं, पर यह भी तो जानते हैं कि इसके बगैर भी कुछ होता-हवाता नहीं!"

मैंने जानना चाहा कि ग्वालियर के किशोरों की साहित्य के प्रति क्या रुचि है.

कमलाराजा कन्या महाविद्यालय की प्रेसिडेंट चंद्रा से मैंने पूछा—"सुनते हैं, आपके कालेज की छात्राएं उपन्यास खूब पढ़ती हैं और वह भी गुलशन नंदा के उपन्यास !" चंद्रा जोर से हंस पड़ी, बोली—"हां, बात तो एकदम सही है. इस उम्र में जो आकर्षण हो सकता है, वह इन उपन्यासों में मिल जाता है."

"कुंकुम जी यह बताइए कि नाटकों-वाटकों में आपकी रुचि कहां तक है?" बोलीं—"रुचि तो है, पर आपका ग्वालियर शहर भी अजीब है. यहां नाटक-वाटक होते कहां हैं? स्कूली नाटक तो बस यूं ही होते हैं. यूनियन के प्रोग्राम में नाटक होना जरूरी है, तो बस खेल लिया एकाध नाटक-वाटक. पर नाटक जैसी सीरियस विधा को कोई उस तरह 'ट्रीट' करे तब न! एक अच्छा थियेटर भी तो यहां नहीं है, जहां नाटक हो सके."

चंद्रा बुंदेला सितार बढ़िया बजाती है. जब मैंने पूछा—"संगीत के मामले में आपको ग्वालियर कैसा लगता है?" बोलीं—"अब तो बस इतिहास दोहराया जाता है कि ग्वालियर संगीत का मैका है. पर यहां संगीत के नाम पर कुछ होता-हवाता नहीं. तानसेन समारोह को छोड़ दें तो एक भी म्यूजिक कान्फ्रेंस अच्छी तरह नहीं होती."

●

रुचियों के मामले में हर किशोर की रुचि अलग-अलग है. अंजली पामनीस और चंद्रा बुंदेला सितार सीखती हैं. अंजली पामनीस की सितार की रुचि एक खास वजह से है. बोली—"मेरी मम्मी सितार सीखना चाहती थीं, पर जब नहीं जमा पाईं तो मुझे सितार क्लास में भेज दिया. अब मेरी बेहद रुचि है."

अजय सिंह हारमोनियम अच्छा बजाते हैं. बोले—"अंकल, जरा हमारे सेंट्रल स्कूल के प्रोग्राम में आइए, तब सुनिए जरा. . ."

नीतिन ओगलेकर की शास्त्रीय संगीत में रुचि है. उनके प्रिय संगीतकार हैं बड़े गुलाम अली खां. लोकेशकुमार को दोस्तों के साथ शामें बिताने का शौक है. नीलम देशपांडे पत्रिकाएं पढ़ती है—फेमिना, माधुरी, धर्मयुग, पराग. . . पर उनकी राय है कि 'पराग' को छोड़कर एक भी पत्रिका हमारा प्रतिनिधित्व नहीं करती. हम अच्छी पत्रिकाओं की तलाश में रहते हैं जो हमारी बातें समझ सके, सुन सके. . .

अपनी इस आकलन के आधार पर मैं विश्वास पूर्वक कह सकता हूं कि ग्वालियर के किशोर आज के युग को दृष्टि में रखते हुए, औचित्य की सीमाओं तक जागरूक हैं और उत्साहपूर्वक समय से कदम मिलाकर चलने के लिए भी प्रयत्नशील नजर आते हैं. ●

हिंदी विभाग, माधव महाविद्यालय, ग्वालियर-1


छोटू और लंबू
अप्रैल का महीना आ गया है, लंबू, इस बार शायद हमें कोई मूर्ख नहीं बना सकेगा!
न हम किसी से मिलेंगे, न किसी की बातों में आएंगे! अपनी आंख और दिमाग खुले रखेंगे.
फिर कौन है जो हमें मूर्ख बना सकेगा!
पोस्टमैन!
?
जहन्नुम में जाए! बाहर मत आना!
ठीक है!
अरे भई, जल्दी बाहर आओ, तुम्हारा पार्सल आया है!
अरे, तुम लोग पोस्टमैन को क्यों परेशान करते हो? बाहर निकल कर पार्सल लेते क्यों नहीं!
क्या मुसीबत है!
चलो पच्चीस पैसे और लाओ, टिकट कम लगा है! कलकत्ते से पार्सल आया है!
नहीं, नहीं, हमें नहीं चाहिए! ले जाओ इसे, हम न पच्चीस पैसे देंगे न इसे लेंगे!
यार, बड़े शर्म की बात है, तुम पच्चीस पैसे नहीं दे सकते!


हे! हम कंजूस ही सही! बड़े धनी हो तो तुम ही पच्चीस पैसे
अबे, तुम समझते क्या हो, यह लो!
चलो साइन करो! मैंने आज तक तुम जैसा कोई नहीं देखा!
यह लो!
और पीछा छोड़ो!
हूं! यह पार्सल मुखर्जी ने भेजा है और लिखा है कि अंदर रसगुल्ले
रसगुल्ले!
देखो भई, पच्चीस पैसे मैंने दिये हैं, थोड़े रसगुल्ले तुम्हें मुझे भी देने होंगे!
अरे, तुम पूरा डिब्बा ही रखो न, हमें भी क्या याद करोगे!
सुलेमान!
और फिर...
मुखर्जी बड़ा शरारती है! डिब्बे में उस ने मूर्ख बनाने वाली कोई ऐसी चीज रखी होगी कि डिब्बा खोलते ही ढंगूजी की मुसीबत आ जाएगी!
हा, हा, हा! इस बार हमें कोई नहीं मूर्ख बना सकेगा!
सहसा...
अरे गंगवा, क्या खा रहा है, भई?
रसगुल्ले!
यह अब्बा ने आपको चिट्ठी दी है!
मर गए! ढंगूजी ने मुखर्जी की चिट्ठी भेजी है, पार्सल में सच-मुच रसगुल्ले थे जो उसने लाटरी मिलने की खुशी में भेजे थे!
हाय! इस बार हम फिर मूर्ख बन गए!

जासूसी कहानी

कुत्ते की मुसीबत

— क्राइम कीट —

बंबई की सी. आई. डी. में कांस्टिबिल कालेश्वा की अपनी अलग हैसियत है. यह कभी किसी के दिमाग में नहीं आया कि उसे कांस्टिबिल से हेड कांस्टिबिल ही बना दिया जाए. मगर डिप्टी कमिश्नर, और कभी-कभी कमिश्नर साहब तक उसके सामने झेंप जाते हैं. कारण यह कि उसके चेहरे पर जब देखो तब एक व्यंग-भरी मुस्कराहट खेलती रहती है. उसे क्रिमिनल इन्वेस्टिगेशन डिपार्टमेंट के हर इंस्पेक्टर की बुद्धि पर तरस आता है. वह कहता है कि इन लोगों की बुद्धि है तो बड़ी पैनी, लेकिन सामान्य बुद्धि नाममात्र को नहीं है. जो थोड़ी-बहुत इत्तफ़ाक से है भी, वह वक्त पड़ने पर घास चरने चली जाती है.

और यह व्यंगपूर्ण आलोचना कोरी आलोचना नहीं होती. वक्त पड़ने पर कांस्टिबिल कालेश्वा की बुद्धि एक ऐसी विचित्र 'कॉमन सेंस' में बदल जाती है कि जो दूसरों को लाख दृष्टि गड़ाने पर भी दिखाई नहीं देता, वह उसे तुरंत दूर से ही दिखाई पड़ जाता है.

अब उसी मामले को ले लीजिए, जिस में डिप्टी कमिश्नर बापट साहब झख मार गए थे, लेकिन केस की गुत्थी का सिरा ही हाथ नहीं आ रहा था.

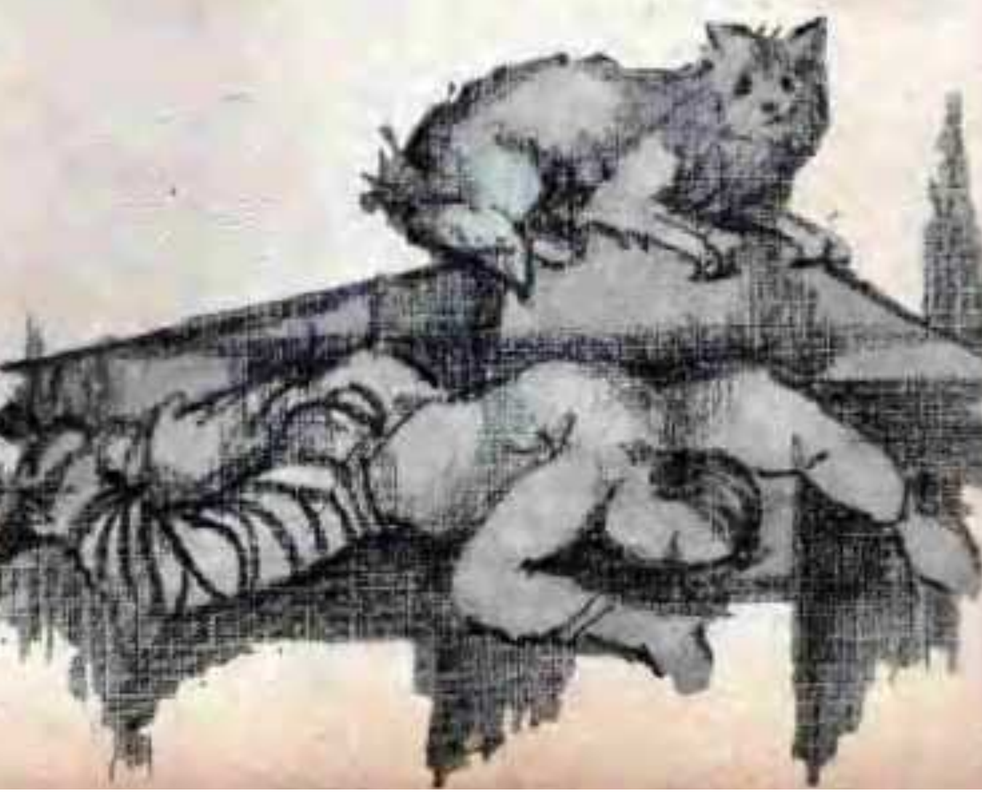
केस इस तरह था—

परेल में हालांकि आधुनिक बंबई की इमारतें बहुत कम दिखाई पड़ती हैं, लेकिन कई मालों की इमारतें जरूर हैं, भले ही उनके दरवाजों में लगी लकड़ी सड़-गल गई हो. इन इमारतों में घुसो, तो भर दुपहरी में मैटिनी शो के हॉल का मजा आता है. हाथ को हाथ सुझाई न दे. ऐसी ही इमारतों में थी—और अब भी है—गुलशन मंजिल. उसके दूसरे माले के फ्लैट नंबर 4 में बसंतराव रहता था. गबरू नौजवान, रंग एकदम चिट्टा-गोरा, उम्र यही लगभग सत्ताइस-अट्ठाइस, ब्याह-शादी के झंझट से दूर, सुरेंद्रा एंड सुरेंद्रा नामक बड़ी कंपनी में नौ सौ रुपए माहवार का आफिसर—बंबई की तितलियों को और क्या चाहिए? आफिस के बाद का सारा वक्त उसका अपना, पैसा फूंकने के लिए उसके पास, और मैटिनी शो के हॉल जैसी बिल्डिंग में तीन कमरों का पुराना, लेकिन भीतर से सजा-धजा शानदार फ्लैट. प्राय: हर तीसरे-चौथे एक न एक सुमुखी उसकी अतिथि होती थी. बिल्डिंग में अनेक सद्गृहस्थ रहते थे और उनमें से अनेक लड़कियों के पिता थे. वे उसकी तरफ़ से बराबर खबरदार रहते. लेकिन पांच बरस उसे इस बिल्डिंग में रहते हो गए—और सब पुराने किरायेदार, वह नया—सब से ज्यादा किराया देने वाला—फिर भी मजाल है कि आज तक किसी लड़की की तरफ़ नजर उठाकर देखने का आरोप उसपर लगा हो. वात्स्यायन का कामसूत्र भले ही उसने न पढ़ा हो, लेकिन पड़ोसियों या मित्रों का स्त्री-धन उससे एकदम सुरक्षित समझा जा सकता था. अपनी सीमाओं के भीतर वह अपनी प्रेमिकाओं के प्रति काफ़ी वफ़ादार भी था. प्राय: छह-छह महीने तक उसकी एक ही प्रेमिका बनी रहती थी—यहां तक कि बिल्डिंग के सद्गृहस्थ बिल्डिंग में अंधेरा रहते हुए भी उसे पहचान जाते थे.

कोई उसपर विश्वास करे या न करे, लेकिन वह एक प्राणी पर अगाध विश्वास करता था. वह हर वक्त उसके साथ रहता था. आफिस में भी वह उसके साथ जाता था और बिना किसी चूं-चरा के उसकी बड़ी मेज के नीचे उसके पांवों के पास बैठा रहता था. वह था एक छोटा-सा बिल्ली जैसा कुत्ता. झबरैले उसके बाल थे. एकदम दीन-हीन. जब किसी अपरिचित को देखता था, तो कुछ देर रुककर भौंकता था. परिचित हो या दूसरी बार अतिथि को देखा हो, तो उसके मुंह से आवाज तक नहीं निकलती थी. दार्शनिक प्रोफ़ेसर की तरह उसकी आंखों पर उसके लंबे-लंबे बाल पड़े रहते थे. उसके सारे शरीर पर लंबे-लंबे बाल थे. बसंतराव ने फ़ैशन के तौर पर उसके पेट और कमर के घेरे तथा पैरों पर से बाल साफ़ करा रखे थे. गले से भी बाल साफ़ थे. पहली ही नजर पर वह एक नवयुवती की तरह लगता था, जिसके पास सिवा ब्रेसियर्स या नेग्लिजी के और कुछ पहनने को शेष न रह गया हो. बसंतराव के रंगीलेपन से सभी अच्छी तरह परिचित थे—इसलिए उसकी यह वेशभूषा उससे मिलने वाली नई लड़कियों को थोड़ा गुदगुदाती थी.

उस दिन सी. आई. डी. विभाग में जब बसंतराव की हत्या का समाचार पहुंचा, तो डिप्टी कमिश्नर बापट कांस्टिबिल कालेश्वा को लेकर गुलशन मंजिल पहुंचे. परेल के पुलिस इंस्पेक्टर पुरंदरे वहां मौजूद थे. फ्लैट का कोई भी सामान हटाया नहीं गया था. सब ज्यों का त्यों था. यद्यपि बसंतराव का शव कालीन पर औंधा पड़ा था, लेकिन उसके शरीर पर कपड़े टिप-टॉप थे. उसके पास ही मिनी जीभ निकाले बैठा था और हांफ रहा था. वह मिस्टर बापट को देखकर दो-चार बार भौंका, दो कदम पीछे हटा और फिर तीन बार इधर से उधर पूंछ हिलाकर बैठ गया.

दरवाजे पर खड़े होकर मिस्टर बापट ने ध्यान से कमरे की हर चीज को देखा. हर चीज, हर फ़रनीचर कायदे से सजा था. कहीं कोई सामान इधर से उधर नहीं था. डबल-बैड की चादरें



एकदम साफ़ और बिना शिकन. मिस्टर बापट ने प्रश्न-सूचक दृष्टि से इंस्पेक्टर पुरंदरे की ओर देखा.

"हत्या इस कमरे के भीतर नहीं हुई," इंस्पेक्टर पुरंदरे ने पहली सूचना दी. "कमरे में लड़ाई-झगड़े के कोई लक्षण नहीं. खून की कोई बूंद या धब्बा कहीं नहीं. प्वाइंट 38 की गोली बहुत नज़दीक से चलाई गई और दिल को पार कर गई. हत्या करने के बाद यहां लाकर छोड़ दिया गया. सुबह सफ़ाई करने के लिए जब महरी आई और घंटी बजाई, तो भीतर से कुत्ते के भौंकने की आवाज़ आई. लेकिन दरवाज़ा नहीं खुला. महरी की छोकरी कहती है कि ऐसा कभी नहीं हुआ कि कुत्ता फ्लैट के भीतर अकेला रह गया हो. जब कुत्ता भौंकता ही रहा, तो उसने बिल्डिंग के चौकीदार को खबर दी. दस बजे तक चौकीदार ने प्रतीक्षा की. फिर उसने वसंतराव के दफ़्तर में फ़ोन करवाया. पुलिस को ग्यारह बजे समाचार मिला. मास्टर-की से दरवाज़ा खोला गया. उसके बाद जो देखने को मिला वही आपके सामने है."



अब शाम के चार बज रहे थे. इस बीच कोई विशेष घटना नहीं घटी थी. फिंगर-प्रिंट ब्यूरो के लोग आए थे और बहुत सारी लड़कियों की कोमल-कोमल उंगलियों के निशान फोटोग्राफ करके ले गए थे. लेकिन ब्यूरो के क्रॉफ़ोर्ड मार्केट स्थित भवन में इन निशानों का कोई रिकार्ड मिलने की संभावना नहीं थी. इन लड़कियों में से कोई भी छंटे हुए अपराधियों की श्रेणी में नहीं आ सकती थी. वे सब बंबई के आधुनिक समाज की अंग थीं. पड़ोसियों के साथ सवाल-जवाब कर के कुछ के हुलिये ले लिये गए थे. किंतु फ्लैट में एक भी प्रेम पत्र नहीं मिला था. लगता था वसंतराव इस बारे में विशेष रूप से सतर्क रहता था. वह पत्र-व्यवहार की बनिस्बत साक्षात् व्यवहार में विश्वास करता था.

कुत्ते की हल्की-सी गुर्राहट, जमी हुई नज़र और धीरे-धीरे पीछे हटने के भाव से चौंक कर इंस्पेक्टर पुरंदरे और मिस्टर बापट ने देखा कि कालेखा कांस्टेबिल और कुत्ते के बीच एक विचित्र हिप्नोटिक व्यवहार चल रहा है. दोनों की नज़रें एक-दूसरे में गुंथी हुई थीं. प्रकट था कि कुत्ता कांस्टेबिल कालेखा के भारी-भरकम चेहरे पर लगी लंबी नाक, नाक के नीचे झब्बेदार मूंछों और बड़ी-बड़ी आंखों के तीव्र प्रकाश को सहन न कर पाने के कारण कहीं दुबकने की चिंता में था.

डिप्टी कमिश्नर बापट की ऐसे मामलों के हल न हो पाने की सूंघ पहली नज़र में ही लग जाती है. वसंतराव के अवैध संबंधों के बारे में न आफ़िस वाले ही कोई प्रकाश डालने वाले थे, न बिल्डिंग वाले. वह एक ऐसा आदमी था, जिसकी किसी रिश्तेदारी का कोई हवाला आफ़िस की फ़ाइलों में नहीं था. उसका फ्लैट अक्षत यौवना के अंतर की तरह किसी भी ऐसे संकेत से वंचित था, जिससे उसके जीवन में आने वाली तितलियों के पंखों का रंग जाना जा सकता हो. पुलिस पूरी छानबीन कर चुकी थी—और जब मामले का कोई सिरा हाथ नहीं लग सका था, तभी जासूस विभाग को खबर दी गई थी.

"साहब, इसका तो न सिर है न पैर!"

मिस्टर बापट चौंके. यह बात कांस्टेबिल कालेखा ने कही थी. मिस्टर बापट ने असफलता की छाया को मानो परिहास से उड़ाने की चेष्टा करते हुए कहा, "यह कुत्ता तुम्हें सख्त नापसंद करता है, कालेखा!"

"कुत्ते मुझे नापसंद करते ही हैं, साहब!" कालेखा ने कहा. मिस्टर बापट झेंपकर रह गए.

"यह कुत्ता रहेगा कहां?" इंस्पेक्टर पुरंदरे ने कहा.

"हवालात में," कालेखा ने अपनी व्यंगपूर्ण मुसकराहट के साथ उत्तर दिया. इंस्पेक्टर पुरंदरे भी झेंपे. बोले, "हवालात में कुत्तों के रखने का कोई प्रबंध नहीं है."

"सोच लीजिए," कालेखा निर्लिप्त भाव से बोला. "इस केस का यही अकेला गवाह है, जो मुजरिम को पहचान सकता है."

"लेकिन यह बोल तो नहीं सकता," इंस्पेक्टर पुरंदरे ने कहा. वह अब तक यही सोच रहे थे कि किसी तरह उनकी हवालात इस कुत्ते की मौजूदगी से पाक ही रहे. "कौन मजिस्ट्रेट इसकी गवाही को कबूल करेगा?"

कालेखा मिस्टर बापट की ओर देखकर होले से हंसा, मानो इस बेवकूफ़ी की बात का जवाब मिस्टर बापट ही दे सकते हैं. मिस्टर बापट ने जानबूझ कर उससे नज़रें नहीं मिलाईं.

"देखिए तो," कालेखा बोला, "यह हरामी किस तरह आराम से बैठा टुकुर-टुकुर ताक रहा है! इस दुनिया में मुजरिम के अलावा यही एक ऐसा जानवर है, जो यह जानता है कि कत्ल कहां हुआ और किसने किया. इतने ज़बरदस्त गवाह को छुट्टा कैसे छोड़ा जा सकता है, साहब?"

एकदम होपलेस केस! —मिस्टर बापट सोच रहे थे. कालेखां स्थिति को जिस को समझ चुका है और कुत्ते को हवालात में रखने की बात में एक अजीब मजाक की हालत पैदा कर रहा है. वह बोले, "कालेखां, यह कुत्ता तुम्हारे सुपुर्द है. तुम इसे हिप्नोटाइज कर के इसकी रूह से मुजरिम का पता मालूम कर सकते हो."

"मैं कोशिश तो कर रहा था, साहब," कालेखां ने तुरंत उत्तर दिया. "पर यह कंबख्त मीडियम बनने से कतरा रहा है. मैंने आज तक इतना डरपोक कुत्ता नहीं देखा. हम लोगों की शक्ल देखकर ही साले की कांच निकली जा रही है!"

"यह सिर्फ तुम्हारी शक्ल को ही देख रहा है शुरू से, कालेखां," मिस्टर बापट हंसकर बोले.

"ठीक है, साहब. मैं ही इसे रख लेता हूं. यह भी साला क्या याद करेगा कि कालेखां से पाला पड़ा था. इसका रावन-चाली बंद न कर दिया, तो मेरा नाम भी कालेखां नहीं."

कालेखां ने दीवार पर लटकी पतली-सी जंजीर कुत्ते के पट्टे में फंसाई. इसके बाद वह उसका चार्ज लेकर खड़ा हो गया. डिप्टी कमिश्नर ने फ्लैट की छानबीन करनी शुरू की. एक-एक चीज, एक-एक किताब और कागज-पत्तर. किताबें अधिकतर सस्ती और वाहियात थीं. बसंतराव टेस्ट में कोई बहुत ऊंचा स्टैंडर्ड नहीं रखता था. एक-एक पड़ोसी के बयान को दर्ज किया गया. किसी ने रात के समय बसंतराव को लेकर किसी को फ्लैट में आते नहीं देखा था. शव को किस तरह फ्लैट के भीतर लाया गया होगा, यह एक समस्या थी. कुत्ता भौंका क्यों नहीं. बिल्डिंग में से किसी ने कुत्ते के भौंकने की आवाज नहीं सुनी थी. सब बयान हुलिये, बसंतराव से मिलने के लिए आने वाली लड़कियों की पहचान के लिए जो कुछ संभव हो सकता था, सब बटोर कर लाश वहां से हटवा दी गई और पोस्टमार्टम के लिए लाशघर में भेज दी गई. फ्लैट में पुलिस का ताला डाल दिया गया.

जब कालेखां कुत्ते की जंजीर थामे उस बिल्डिंग से चला, तो उसकी कांख में 'कुत्ते का भोजन' (डोग फूड) एक सीलबंद डिब्बे की शक्ल में दबा हुआ था. यह डिब्बा उसको मृत व्यक्ति के फ्लैट के भीतर ही मिल गया था. कुत्ता उसके साथ निरपेक्ष दार्शनिकों की भांति, सिर के कुछ बिखरे हुए बाल आंखों के सामने किए चल रहा था. निश्चित रूप से कुत्ते ने अपना भोजन कालेखां की कांख में दबा देख लिया था. इसी लिए उत्साह के साथ उसके कदम कालेखां के लंबे-लंबे डगों का साथ निभा रहे थे.

सारी रात इंस्पेक्टर पुरंदरे और डिप्टी कमिश्नर बापट दौड़-धूप करते रहे. बसंतराव की किसी नायिका का पता उन्हें चल कर नहीं दिया. सुबह के समय, नींद से आंखें लाल किए, जब दोनों ने चाय की एक-एक प्याली से रात भर की थकान दूर करने की कोशिश की, तो विश्लेषण करने पर पता चला कि बसंतराव की हत्या का रहस्य अब भी उतना ही अगाध है, जितना पिछली संध्या को था.

इंस्पेक्टर पुरंदरे ने कहा, "ऐसा लगता है कि इस अभागे ने जानबूझ कर ऐसा इंतजाम कर रखा था कि अगर उसका कत्ल हो जाए, तो पुलिस को लाख सिर मारने पर भी कातिल का पता न चले."

"सिलसिलेवार चलो," बापट ने कहा. "हम लोगों ने पैरों से ज्यादा काम लिया है, दिमाग से कम. रात को बिल्डिंग में से किसी ने कुत्ते के भौंकने की आवाज नहीं सुनी, इसका मतलब है कि काम किसी परिचित का ही है."

"करेक्ट," इंस्पेक्टर पुरंदरे ने अकल पर जोर देते हुए कहा. "और यह भी तयशुदा है कि यह काम या तो अकेले किसी मर्द का है या मर्द-औरत दोनों का—हर हालत में मर्द जरूर शामिल है."

"यह ठीक है," चाय का गरम-गरम सिप लगाते हुए बापट ने कहा. "अकेली औरत मुर्दे को लाद कर उसके घर छोड़ कर नहीं जा सकती. हत्या का कारण ईर्ष्या-द्वेष या शत्रुता ही हो सकती है. न ही फ्लैट में से कोई कीमती चीज चोरी गई है, न ही बसंतराव के शरीर पर से उसकी अंगूठी या सोने की घड़ी गायब हुई है. लालच हत्या का कारण नहीं है."

"फिर, बिल्डिंग कितनी ही अंधेरी क्यों न हो, उसको उसके फ्लैट तक लाने में किसी न किसी की मुठभेड़ हत्यारों से होने की संभावना तो थी ही. इसलिए, हो न हो, हत्या की जानकारी एक से अधिक व्यक्तियों को है, भले ही हत्या करने में एक से अधिक व्यक्ति शामिल हों या न हों."

"तुम्हारा ख्याल है कि वे लोग लाश को किसी ताबूत या बक्से या गठरी में बंद कर के उसके फ्लैट तक नहीं लाए?" बापट ने पूछा.

"इस में खतरा था. इसके अलावा लाश के कपड़ों पर ज्यादा शिकनें नहीं थीं."

दस बजे तक पोस्ट-मार्टम की रिपोर्ट भी आ गई. उसके अनुसार बसंतराव की हत्या खाना खाने के तुरंत बाद हुई. खाने में मटन चोप, चावल, मटर, आलू और शराब शामिल थी. गोली ".38 अमरीकन पिस्टल की थी. नजदीक से चलाई गई थी, क्योंकि कोट की बाईं तरफ, जहां वह लगी थी, कपड़े का कुछ हिस्सा जल गया था.

इंस्पेक्टर पुरंदरे ने मिस्टर बापट के साथ बसंतराव के दफ्तर पर धावा बोला. दफ्तर की खूबसूरत रिसेप्शनिस्ट को अलग कमरे में बुला कर उन्होंने पूछताछ शुरू की. जवाब देते वक्त वह बिलकुल भी घबराई हुई नहीं थी, बल्कि एक तरह की नफरत का भाव उसके चेहरे पर अलक्ष्य बसंतराव के प्रति था.

"बसंतराव से तुम्हारा मेलजोल था?" इंस्पेक्टर ने पूछा.

"उतना ही जितना आप से है," रिसेप्शनिस्ट ने उत्तर दिया.

"उसने कभी तुम पर डोरे डालने की कोशिश

(कृपया पृष्ठ 28 देखिए)

तीन चेहरे

एक थे चम्पू,
एक थे चमचू,
एक थे चमचेलाल,
तीनों ने मिल देश को अपने
किया बहुत बेहाल!
चम्पूजी ने तिकड़म सीखी,
बिना पढ़े ही गुरुडम सीखी,
नेताजी कहलाए!
रिश्वत पाई, बड़े हो गए,
बिन पांवों के खड़े हो गए,
लाखों नोट कमाए!
छोटे गांवों से कस्बों तक,
दली खूब ही दाल!
सब को कर्जदार कर डाला,
होकर मालामाल.
चमचूजी पदभागी निकले,
पूर्व जन्म के त्यागी निकले,
बैरागी बन बैठे!
उद्घाटन-घाटन से आगे,
चले सभी के आगे-आगे,
किसी कार में लेटे.
बड़े शहर की रौनक देखी,
बदले तुरत ख्याल!
जितना हाथ लगा खा बैठे
चले ताल-बेताल!
चमचेलाल चतुर सैलानी,
अपढ़-गंवार मगर थे ज्ञानी,
करते मीठी बातें.
नेता को जोकर कर डाला,
दुनिया को बेघर कर डाला,
चुटकी में कर घातें!
बाहर से फक्कड़ जैसे थे,
भीतर से खुशहाल!
सोने में पीली पत्नी थी,
चांदी की टकसाल!

—तारादत्त 'निर्विरोध'

शीर्षक प्रतियोगिता नं [redacted] परिणाम

पुरस्कार विजयी शीर्षक :

नयन-डोर कठोर खींचकर
लाना उनको द्वारे [redacted]
मौन निमंत्रण लेकर आ तू
ऐ मेरे नन्हे से [redacted]

प्रेषक :
राजनारायण तिवारी
द्वारा प्रो. एस. एन. तिवारी,
एम.एस. कॉलेज, मोतिहारी (बिहार)

अन्य प्रशंसित शीर्षक :

● अंग अंग में उभर पड़ा है
यौवन का उन्माद,
फिर भी भूले नहीं भूलती
मृदु बचपन की याद.
—शिवदत्त शर्मा, हाथरस.

● तमाम उम्र तेरा इंतजार कर लेंगे,
मगर ये रंज रहेगा कि जिंदगी कम है.
—वीरेंद्रप्रकाश शर्मा, कानपुर.

● लगता है राजा का हाथी,
देख इसे रानी मुस्काती.
—विनयकुमार अग्रवाल, [redacted].

● चुप-चुप-सी निगाहें हैं
होंठों पे हंसी-सी है.
अब लौट के आ बचपन,
तुझको ये बुलाती है.
—कुदसिया निकहत.





छाया : डा. एम. एस. अग्रवाल

शीर्षक प्रतियोगिता-38

ऊपर के चित्र को देखिए और ज़रा सोचकर इसका एक बढ़िया और फड़कता हुआ शीर्षक बताइए. अपने शीर्षक सबसे अलग पोस्ट कार्ड पर लिखकर हमें 20 अप्रैल तक भेज दीजिए. सबसे बढ़िया शीर्षक पर 15 रुपये मूल्य की पुस्तकें पुरस्कार में मिलेंगी. हां, कार्ड पर अपना नाम और पता लिखना मत भूलिए. शीर्षक के कार्ड इस पते पर भेजिए :
संपादक, 'पराग' (शीर्षक प्रतियोगिता-38), 10, दरियागंज, दिल्ली-6.

फ़ैशन की निखरती कला



● तीनों भाइयों में ...
कालर व कंधे के आस पास ...
तथा हल्की गुलाबी कमीज ...
गया है. सबसे बड़ा भाई ...
साथ ही काफी चौड़ी पेटी ...

● छिटकी ...
है, जो पीले रंग की ...
रंग का कुरता, ...
व गर्दन के आस ...
बैंगनी 'बैल बॉटम' ...
की कोटी व चूड़ी...

परिधान-सज्जा : मीना विश्वास

...ने सेब रंग के कुरते का चयन किया है, जिसके ...बटन की गई हैं. बीच वाली ने नीली ... बटनों के स्थान पर डोरी का प्रयोग किया ... 'स्लीव' और 'पोलो कॉलर' की कमीज, ... की जैकेट पहने है.

... 'योक' पर गर्दन व सामने की ओर पीले रंग की झालर ... खूब फबती है. बीच की लड़की पहने है हल्के नीले ... ऊपर का हिस्सा सिमटा हुआ है और उस पर कमर ... गई है. उसके साथ 'ग्लास वर्क' की कढ़ाई वाला ... लड़की हरी पत्ती के रंग के कुरते के विपरीत लाल रंग



कुत्ते की मुसीबत

(पृष्ठ 24 से आगे)

नहीं की?" बापट ने पूछा.

"मेरी सैंडिल के नीचे तीन इंच लंबी नुकीली हील है," उत्तर मिला और साथ ही रिसेप्शनिस्ट माया की नाक चढ़ गई. लगता था उसके चाहते हुए भी बसंतराव ने उसे कभी पास नहीं दिया था.

"वेरी बैड!" इंस्पेक्टर बगलें झांकते हुए बोला.

"क्या?" तीखे स्वर में मिस माया ने आंख चढ़ाकर पूछा.

"मेरा मतलब है इस हील का इस्तेमाल मत कर बैठिए किसी दिन," इंस्पेक्टर ने छत की ओर देखते हुए पूछा, "कभी-कभी यह हथियार पिस्तौल से भी ज्यादा खतरनाक साबित होते देखा गया है."

"ऊंह!" मिस माया ने कहा. फिर लगा कि मन ही मन उसने दांत भी पीसे.

"आप किसी ऐसी लड़की को पहचान सकती हैं, जो मिस्टर बसंतराव के साथ देखी गई हो?" मिस्टर बापट ने पूछा.

"वह कुतिया जो उसके साथ रहा करती थी, उसके अलावा और कोई नहीं," मिस माया ने उत्तर दिया.

दोनों ही अधिकारियों को यह बताने की आवश्यकता नहीं थी कि ईर्ष्या के मारे जिस प्राणी को वह कुतिया कह रही थी, वह पुरुष जाति का जीव था. उन्होंने मिस माया को छुट्टी दे दी और महसूस किया कि ; कुनबा डूबा दूं, किस्सा ज्यूं का त्यूं!'

"अरे—कालेखां!" सहसा ही मिस्टर बापट साहब उछले.

"कालेखां? कहां है कालेखां?" इंस्पेक्टर ने आश्चर्य से पूछा.

"मैं कहता हूं कि कालेखां उस कुत्ते को लेकर क्या कर रहा है अब तक? उसे ठीक दस बजे दफ्तर में हाजिर हो जाना चाहिए था."

तुरंत दफ्तर सी. आई. डी. को फोन किया गया. मालूम हुआ कि कालेखां अभी तक हाजिर नहीं हुआ था. बापट ने इंस्पेक्टर पुरंदरे से सलाह कर के निश्चय किया कि कालेखां की औघड़ बुद्धि कभी-कभी बक्त पर बड़ा काम दे जाती है, हालांकि वह पैदायशी बेवकूफ है, इसलिए रास्ते में कालेखां के घर क्यों न होते चला जाए.

इंस्पेक्टर ने कहा, "बापट साहब, बुरा न मानें, लेकिन मेरा खयाल है कि मातहतों को इस कदर बढ़ावा नहीं देना चाहिए कि अफसर उनके घर चक्कर काटा करें."

"अरे, मारो गोली अफसरी को! तुम नहीं जानते, वह औघड़ ही नहीं, औलिया है औलिया, आओ."

जिस समय अपनी अफसरी की शान को भुला कर दोनों उच्च अधिकारी कालेखां की पक्की खोली पर पहुंचे, तो उन्हें एक विचित्र दृश्य दिखाई पड़ा.

खोली के बाहर ही, जमीन में खूंटी गाड़ कर, लंबी जंजीर के सहारे बेचारा दार्शनिक कुत्ता बांध दिया गया था. वह कूं-कूं कर के उछल-कूद रहा था और जंजीर को खूंटी से कसे, खूंटी के चारों तरफ जंजीर को लपेट रहा था. उसकी इस अत्यधिक उत्तेजना का कारण था. कालेखां उसकी पहुंच से थोड़ी दूरी पर खटिया बिछाए बैठा था. उसके हाथ में 'कुत्ते के भोजन' का डिब्बा था और वह उस में अपने दाएं हाथ की पांचों उंगलियां डाले उसके फंके लगा रहा था.

दोनों अधिकारीगण कुछ देर तो विमूढ़ से खड़े इस आश्चर्यजनक दृश्य को देखते रहे. फिर बापट साहब ने पूछा, "ऐ कालेखां, यह क्या हो रहा है? इस बेचारे कुत्ते को क्यों सता रहे हो?"

कालेखां पीछे से बापट साहब की आवाज सुनकर चौंक उठा. उसका मुंह और हाथ 'कुत्ते के भोजन' से सने हुए थे. सहसा ही वह उस स्वादिष्ट भोजन को मुंह में भरे-भरे ठठाकर हंसा और बोला :

"साहब, यह कुत्ता बड़ा हरामी है. अव्वल नंबर का अनुवाला! मैं ने इसे रात को रोटी खिलाने की कोशिश की, इसने उसे सूंघा तक नहीं. दूध पिलाने की कोशिश की, इसने उस में मुंह तक न डाला. साहब, इस डिब्बे को रख कर तो मैं एकदम भूल ही गया था. मुझे बड़ा गुस्सा आया. मैंने भी रात को खाना नहीं खाया. हम दोनों भूखे ही सो रहे. कहना चाहिए, मैं ही सोता रहा, वह तो कम्बख्त सारी रात कूं-कूं करता रहा. सुबह को मुझे डिब्बे का ध्यान आया. जब इस डिब्बे को लेकर मैं इसकी तरफ बढ़ा, तो यह एकदम उछलकर खड़ा हो गया और इसकी तरफ को लपका. मुझे इसपर बेहद गुस्सा आया. ऐसे तो, साहब, मैं भी रोज 'ला बेला' या 'क्वालिटी' में खाने की जिद कर सकता हूं. बस, मैं इसे दूसरों को बेमतलब भूखा रखने की सजा दे रहा था—और कुछ नहीं—" और वह फिर कुत्ते के भोजन का ग्रास मुंह में रखे-रखे ठठाकर हंसा.

"तुमने ड्यूटी पर रिपोर्ट नहीं दी!" बापट साहब उसकी इस हरकत पर हंसने या रोने का निश्चय न करके सख्ती से बोले.

कुत्ता अब तक उछलना-कूदना भूलकर दोनों नवागंतुकों को इस आशा से देख रहा था कि वे कालेखां के हाथों से उसके भोजन का डिब्बा छीन कर उसकी सहायता करेंगे. साथ ही साथ अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए वह उन दोनों की तरफ थूथनी उठाकर कूं-कूं भी कर रहा था. बालों ने अब भी उसकी आंखों को आधा ढांक रखा था.

भोजन का मुंह में रखता ग्रास गटक कर कालेखां ने कहा, "साहब, यह कुत्ता थोड़ी-सी देर में हत्यारे का नाम बताने ही वाला है. मैं इसकी जबान समझने की कोशिश कर रहा था."

"तुम आओ मदद में!" कह कर मिस्टर बापट ने इंस्पेक्टर का हाथ पकड़ा और कालेखां की चाल से बाहर निकल आए.

"आप उसके साथ बजाए सख्ती से पेश..."

"तुम नहीं जानते, इंस्पेक्टर," उसकी बात बीच में ही काटकर मिस्टर बापट बोले. "यह आदमी वाकई औलिया है. ताज्जुब नहीं कुछ ही देर में यह खुद भौं-भौं करने लगे!"

•

कालेखां संध्या तक ड्यूटी पर नहीं आया. तब तक इंस्पेक्टर पुरंदरे और मिस्टर बापट केस की ओर से हताश हो चुके थे.

संध्या को पांच बजे, जब बापट और पुरंदरे दोनों ही आराम करने के लिए जाने वाले थे, कालेखां ने हाजिरी बजाई. इस वक्त कुत्ता उसके साथ नहीं था. आते ही उसने सलाम ठोंकी और बोला, "साहब, हत्यारे का पता चल गया है. वारंट निकलवा लीजिए—चाहे यों ही—"

मिस्टर बापट उछल पड़े, पुरंदरे भी. वे आश्चर्य से कालेखां की तरफ देखने लगे.

"कैसे?" दोनों के मुंह से एक साथ निकला.

"साहब, मैं ने साले कुत्ते को भूखा रखा और उस का भोजन स्वयं चट कर गया. वह मुझ से बहुत ज्यादा चिढ़ गया. मगर कुत्ता असली नस्ल का निकला. सिवा 'डौग फूड' के पट्ठे को कोई खाना पसंद ही नहीं. मैंने उसकी जंजीर खोल दी और मोटर साइकिल पर आगे बैठा कर सारे शहर में घुमाता फिरा. बांद्रा में आ कर रोड नंबर 44 के बीच में कुत्ता भौं-भौं कर के मोटर साइकिल पर से कूद पड़ा और मेरे देखते ही देखते एक मकान में घुस गया. साहब, जब मैं वहां पहुंचा, तो देखता क्या हूं कि एक बड़ी खूबसूरत छोकरी उसके सामने 'डौग फूड' का पूरा डिब्बा ही खोले बैठी थी. वही कांड, वही मार्का."

"फिर?" मिस्टर बापट ने पूछा.

"फिर, साहब, लड़की से सब बातें हो गई. सारी बातें खुल गई. कहिए तो पूरा केस खोल दूं?"

"हां-हां, जल्दी खोलो," मिस्टर बापट ने कहा.

"साहब, कोई बताई देने वाला तो मिलता नहीं. खैर, बात यों है कि बसंतराव अब तक तो ऐसी-वैसी लड़कियों को ही अपने फ्लैट में लाता रहा, पर पिछले महीने से उसका इस लड़की से इश्क हो गया. कहिए कि लड़की को उस से हो गया. लेकिन वह उसके फ्लैट में कभी नहीं गई. वही उसके यहां आता रहा. अपने कुत्ते को भी वह साथ ही लाता था, इसलिए कुछ डौग फूड खरीद कर उसने वहां रख रखा था और कभी वह ले आती थी. साहब, उसका एक भाई है, जिसने अमरीका से कोई ऊंची डिग्री ले रखी

है और वहीं का नागरिक भी है कोई ऊंचा ओहदा है. पिस्तौल भी उसके पास है. उस कम्बख्त को गले का कैंसर है और अमरीका के डाक्टरों ने उसके जीने की मियाद कुल तीन महीने बांध रखी है, जिस में से एक गुजर चुका है. उसने इस लड़के यानी बसंतराव के कैरेक्टर का पता किसी तरह लगा लिया और अपनी बहन को उसके साथ पेंगें बढ़ाने से रोका. लेकिन न वह मानी, न वह माना. इसलिए उसने बसंतराव को अपनी पिस्तौल से गोली मार दी. यह देखकर लड़की बेहोश हो गई. जब तक वह होश में आई, तब तक करने को सिर्फ एक ही काम बाकी रह गया था—किसी तरह अपने भाई को कानून के पंजे से बचाना. दोनों बसंतराव की लाश को उस लड़के की कार में डाल कर रात को ग्यारह बजे के करीब उसके फ्लैट में छोड़ गए. चाबी उसी के कपड़ों में थी."

दोनों अधिकारी आंखें झपका-झपका कर कालेखां की सूरत को देख रहे थे.

"तुमने उस लड़के को फौरन गिरफ्तार क्यों नहीं किया?" इंस्पेक्टर पुरंदरे ने पूछा.

"कैसे करता, साहब?" कालेखां मजबूरी के स्वर में बोला, "वह तो पहले ही अपनी कार लेकर रफूचक्कर हो चुका है. वैसे भी वह दो महीने से ज्यादा जीने वाला नहीं है. आप चाहें तो सारे मुल्क में उसके पीछे पुलिस दौड़ा कर पकड़वा सकते हैं उसे."

"और लड़की को—?"

"साहब, वह लड़की कहीं भागी नहीं जाती. अब कालेखां क्या लड़कियों को गिरफ्तार करता फिरेगा? यह जरूर है कि उसने अपने भाई की मदद की और वह अदालत में पेश होनी चाहिए. पर, साहब, क्या यह काम किसी और को नहीं सौंपा जा सकता... ?" फिर वह झेंपता हुआ बोला, "और, साहब, खुदा झूठ न बुलवाए, सुबह से सिवाय 'डौग फूड' के और कुछ पेट में नहीं गया है. अगर इजाजत हो, तो बंदा कुछ आदमियों के खाने लायक चीजें पेट में डाल ले!"

डिप्टी कमिश्नर मिस्टर बापट ने कालेखां की पीठ भी नहीं ठोंकी. उससे सब पते-ठिकाने मालूम कर के उन्होंने रुखाई से उसे आदमियों के लायक खाना खाने की इजाजत दे दी और फिर रात को पुलिस स्टेशन या सी. आई. डी. दफ्तर में आने से भी छुट्टी दे दी.

जब वह होटल में घुसा, तो होटल के मालिक की तरफ मुस्कराते हुए देख कर उसने केवल इतना कहा, "घसीटाराम, तू आज चाहे मुझे मोहनभोग ही क्यों न खिला दे—पर मैं तेरी तारीफ में एक भी लफ्ज नहीं बोलूंगा. पहले ही बताए देता हूं. दुनिया जिस तरह चलती है, उसी तरह चलना चाहिए."

घसीटाराम ने बिना तारीफ की परवाह किए कालेखां के पेट को स्वादिष्ट पकवानों से ठस कर दिया. ●

बुरूंश का फूल (पृष्ठ 7 से आगे)

थे. कोई भी उन्हें नहीं देख सकता था.

जुंग ने डरते डरते पूछा, "तेरा बाप कहां है?"

रोते-रोते याची बोली, "तुझे कुछ पता भी है. चीनियों ने बस्ती पर कब्जा कर लिया. कितने ही लोगों को मार डाला, निहत्थे गांव वाले क्या करते, बेचारे बारूद की भट्ठी में भुन गए! उधर चौपाल में लोग इकट्ठे हो रहे हैं. वहीं गया. चीनियों के कप्तान को किसी ने मार दिया था. बाद में चीनियों ने उसे ढूंढा तो उसकी लाश एक खड्ड में मिली. अब उन्होंने यह ऐलान किया कि जिस आदमी ने कप्तान को मारा है, वह सवेरे तक अपने आप को चीनियों के हवाले कर दे, वरना किसी को जिंदा नहीं छोड़ा जाएगा. सारे गांव वाले मिलकर सोच-विचार रहे हैं!" याची ने डर से थूक निगलते हुए कहा, "देख, किसी से कहियो मत. खून तो दरअसल मेरे बाप ने ही किया था उसका. लेकिन अब . . ." वह आगे न बोल सकी. उसके आंसू ढलक पड़े.

खामोश और बुझा-बुझा-सा जुंग सकते में आ गया. उसने सुना, गांव में किसी को जिंदा न छोड़ा जाएगा. वह तेजी से एक ओर को चल दिया.

"अरे, कहां जा रहा है? यहीं छिप जा!" याची ने उसे जाते देखकर पीछे से कहा.

लेकिन उसने कुछ न सुना. वह आगे बढ़ता चला गया और अनेक झोंपड़ों की ओट में छिपता हुआ एक बड़े से झोंपड़े के पीछे जा पहुंचा, जहां बस्ती के जवान और बूढ़े बैठे हुए विचार-विमर्श कर रहे थे. याची का बाप जो बस्ती का गाम (मुखिया) था, सामने खड़ा हुआ लोगों को समझा रहा था, "हममें से एक न एक को जान देनी ही पड़ेगी. बोलो, कौन है वह व्यक्ति, जिस ने कप्तान को मारा है? उसे चाहिए कि वह अपने आप को खुद ही चीनियों के हवाले कर दे, क्योंकि यह पूरी बस्ती की जिंदगी का सवाल है."

याची का बाप भाषण दिए जा रहा था और उसके शब्द कांप रहे थे, शरीर पत्ते की तरह हिल रहा था. उसने क्षणभर रुककर देखा, कोई जवाब नहीं. वह फिर बोला, "भाइयो, सुबह होने में कुछ ही देर रह गई है. निर्मम चीनियों का अत्याचार शुरू होने से पहले अब भी कोई यह जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ले. यह एक बहुत बड़ा बलिदान होगा. भगवान के लिए कोई तो कुर्बानी के लिए तैयार हो जाए!" कहते कहते उसका गला सूख गया.

दो-चार बूढ़े-बुजुर्गों ने भी कहा, "वह अपने आप को खुद ही क्यों नहीं प्रकट कर देता, जिसने सारे गांव को इस मुसीबत में डाला है."

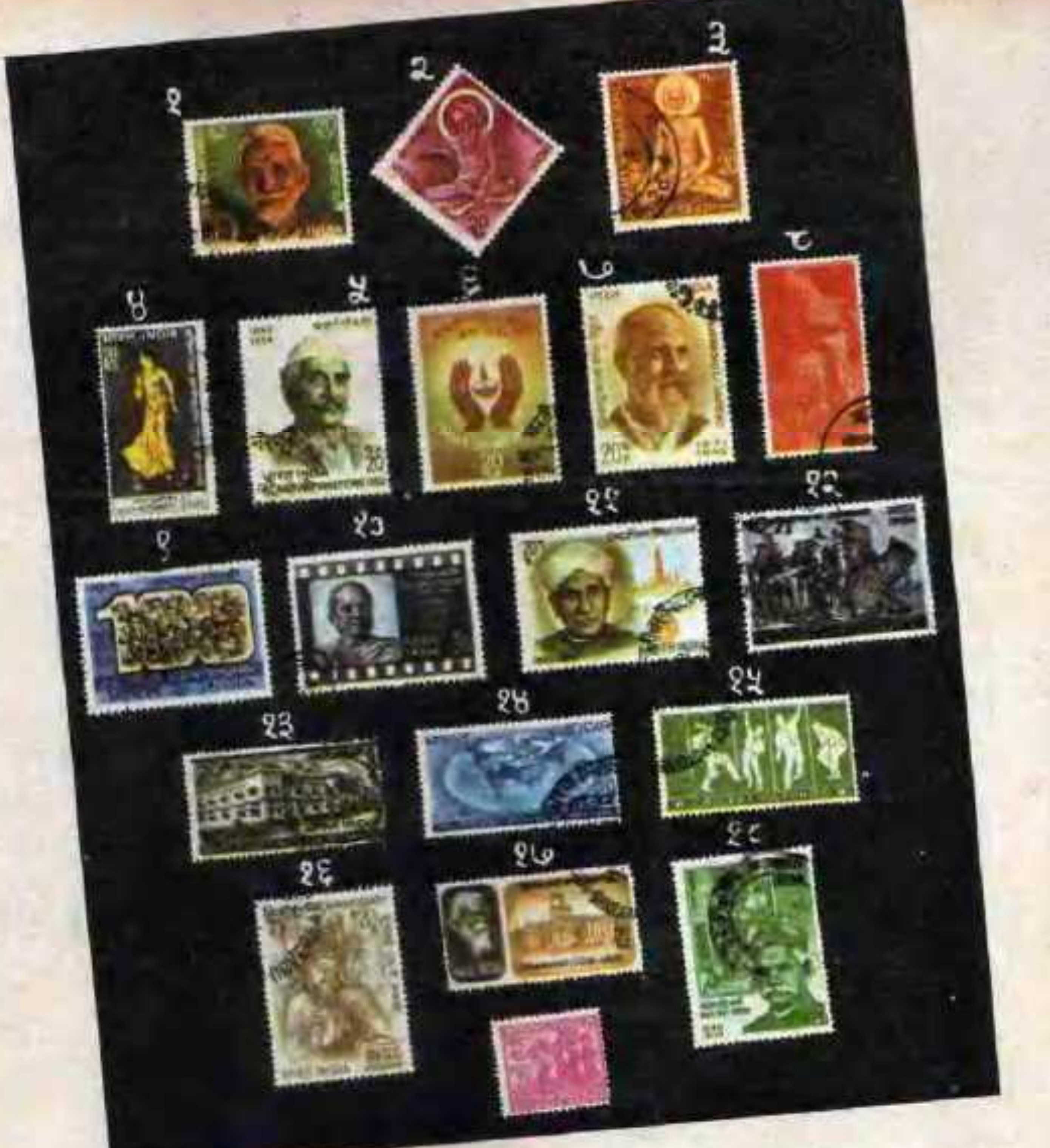
लेकिन कोई माई का लाल आगे न बढ़ा.

जुंग झोंपड़े के पीछे खड़ा सब कुछ देख रहा था. सुबह होने में थोड़ी ही देर थी. वह सोचने लगा, 'मैं ही आगे बढ़कर क्यों न बता दूं कि यह है याची का बाप, जिसके कारण आज सारे गांव वालों की जान पर बनी हुई है. इससे गांव के लोगों की निरपराध जानें तो बचेंगी. और इस प्रकार याची के बाप को चीनियों के सुपुर्द करके मैं उसे लेकर किसी और बस्ती में चला जाऊंगा, खुद उसका पालन-पोषण करूंगा.' लेकिन, तभी उसे याद आ गया याची का भोला-भाला चेहरा, 'देख, किसी से कहियो मत, खून तो दरअसल मेरे बाप ने ही किया था उसका . . .' और फिर वे सिसकते स्वर उसके दिमाग में गूंजकर मुंह पर ताला लगा गए. उसने सोचा, 'मेरी सुनेगा ही कौन! अच्छा है, गिरि जी को भी सजा मिल जाएगी. सामने ही पालथी मारे गिरि जी भी विराजमान थे, जिन्होंने उसे जन्मजात मनहूस बना दिया. अब कुछ ही देर में चीनी बिना पूछताछ गोली-बारी आरंभ कर देंगे. लेकिन . . . क्या इन बच्चों की मुस्कराहटें नोच ली जाएंगी. मांओं के सीनों से उनके प्यार भरे दिल निकाल लिए जाएंगे और पिताओं की छातियां गोलियों से फोड़ डाली जाएंगी. और याची के मानव-प्रेम की स्वर्ग जैसी बस्ती, दया और सहानुभूतिपूर्ण हृदय का प्रदेश, बारूद की भयंकर आग में जला दिया जाएगा! नहीं नहीं! इन फूलों को कोई नहीं नोच सकता. यह बस्ती, इन पहाड़ों की मुस्कान है, इसे कोई नहीं जला सकता.'

चांदनी फीकी पड़ने लगी, सितारे भी फीके पड़ गए और सामने ही सभा में बैठे लोगों के चेहरे भी फीके पड़ गए. फिर, आसमान निखरने लगा और लोगों के चेहरों पर हवाइयां उड़ने लगीं. लोगों के दिल बैठने लगे. सहसा, सुबह की पहली किरण के साथ ही सब के चेहरे पीले पड़ गए. चीनियों द्वारा गोलीबारी किए जाने से पूर्व ही लोग भाग चलने की तैयारी करने के लिए उठ-उठ कर जाने लगे.

. . . मगर सूरज चढ़ आया, गोली तो गोली कहीं पत्ता भी न खड़का. दूर तक पहाड़ों पर धूप फैल गई. चीनियों के 'कैम्प' के आगे खड़े एक सूखे से पेड़ पर एक लाश लटक रही थी, जिस के गले में रस्सी का फंदा कसा हुआ था. एक आदमी ने डरते-डरते अपने झोंपड़े से बाहर सिर निकाला और लाश पर दृष्टि पड़ते ही एकाएक उसके मुंह से निकला, 'मनहूस!'

मगर कहीं कोई अनिष्ट न हुआ. लाश ज्यों की त्यों लटकी रही. और दूर तक याची के मानव प्रेम की बस्ती और दया व सहानुभूति का प्रदेश, बुरूंश के लाल फूलों में धूप की भीनी-ठंडी हंसी होंठों पर लिए शांतिपूर्वक मुस्कराता रहा. और बापू के लाख समझाने पर भी कि अब वह कभी नहीं आएगा, याची दिन भर मंडुए की रोटियां लिए मनहूस की प्रतीक्षा करती रही. ●



1971 के डाक टिकट

एक वर्ष और बीत गया—डाक टिकट प्रेमियों को 18 विशेष टिकटों की भेंट देकर, किंतु संग्रहकों की चीख-पुकार के बावजूद भी न उनके रंग-रूप में ही कोई परिवर्तन हुआ और न उनके डिजाइनों में ही कोई सुधार. टिकट छापने की नई मशीन से बहुरंगे आकर्षक टिकट पाने का सपना इस वर्ष भी साकार न हो सका. इस वर्ष जारी किए गए विशेष डाक-टिकटों में आधे तो विभिन्न महापुरुषों की स्मृति में जारी किए गए और शेष आधे विशेष दिवसों के अवसर पर.

इस वर्ष का सर्वप्रथम विशेष टिकट दिनांक 11-1-71 को भारतीय जीवन-बीमा-व्यवसाय की शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित किया गया.

चटकीले पीले रंग के इस टिकट पर चमकीले लाल रंग में जीवन बीमा निगम का प्रतीक-चिह्न अंकित किया गया है. (चित्र सं. 6)

वर्ष का दूसरा विशेष टिकट विख्यात राष्ट्रीय शिक्षण संस्था काशी विद्यापीठ (विश्वविद्यालय) की स्वर्ण जयंती के अवसर पर दिनांक 10-2-71 को जारी किया गया. भूरे रंग के इस टिकट पर विद्यापीठ भवन का चित्र अंकित है. इस संस्था का उद्घाटन हजारों देशभक्त भारतीयों की उपस्थिति में 10 फरवरी 1921 को महात्मा गांधी द्वारा किया गया था. इस संस्था में प्रारंभ से ही सभी विषयों की शिक्षा राष्ट्रभाषा हिंदी के माध्यम से दी जाती रही है. (चित्र सं. 13)

दिनांक 10-2-71 को ही प्रसिद्ध भारतीय संत रविदास (रैदास) की स्मृति में भूरे लाल रंग का हीरेकाकार टिकट निकाला गया. संत रविदास का जन्म 15वीं शताब्दी के आस-पास एक चमार परिवार में हुआ था. भगवद्भक्त रैदास ने अनेक 'सबद' रचे, जिनमें से 41 'सबद' गुरु-ग्रंथ साहब में संग्रहीत हैं. (चित्र सं. 2)

दीनबंधु चार्ल्स फ्रेयर एंड्रूज की जन्म शताब्दी के अवसर पर दिनांक 12-2-71 को गेरुए रंग का टिकट निकाला गया. 100 वर्ष पूर्व इसी दिन स्वर्गीय एंड्रूज का जन्म इंग्लैंड के न्यूकैसल-आन-टाइन नगर में हुआ था. निर्धन भारतीयों एवं श्रमिकों की दुर्दशा देखकर आप भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के समर्थक बन गए. भारत और भारतीयों के इस सच्चे मित्र का देहांत सन् 1940 में कलकत्ता में हुआ. (चित्र सं. 7)

विख्यात समाजवादी विचारक, देशभक्त एवं शिक्षा विशारद आचार्य नरेंद्रदेव की स्मृति में 19 फरवरी को जो विशेष टिकट प्रकाशित किया गया उस पर आचार्य जी का चित्र अंकित है. नरेंद्रदेव का जन्म सन् 1889 में और निधन सन् 1956 में हुआ. वे स्वतंत्रता आंदोलन में निरंतर भाग लेते रहे. 20 वर्षों तक वे काशी विद्यापीठ के और बाद में बनारस व लखनऊ विश्वविद्यालयों के उपकुलपति रहे. (चित्र सं. 5)

भारत में प्रथम व्यापक जनगणना सन् 1871-72 में हुई. इस वर्ष जनगणना की शताब्दी के उपलक्ष में नीले और भूरे रंग का एक सुंदर टिकट दिनांक 10-3-71 को निकाला गया, जिस पर 100 के अंक में देश के विभिन्न वर्गों के लोगों का चित्रण है. (चित्र सं. 9)

महर्षि रमण की 21वीं निधन-तिथि के अवसर पर दिनांक 14 अप्रैल को उनके चित्र से युक्त एक विशेष टिकट निकाला गया. (चित्र सं. 1)

विश्व-विख्यात भारतीय कलाकार राजा रवि वर्मा की 123वीं जन्म-तिथि 29 अप्रैल को हरे रंग का एक विशेष टिकट निकाला गया, जिस पर राजा रवि वर्मा के साथ ही उनकी एक प्रसिद्ध कलाकृति 'दमयंती और हंस' का चित्र अंकित है. राजा रवि वर्मा का जन्म 29 अप्रैल 1848 को केरल के किलिमानूर स्थान में हुआ था. अपने चाचा राजा राजा वर्मा की कला से प्रभावित होकर रवि वर्मा ने पौराणिक विषयों पर सुंदर चित्र बनाना प्रारंभ कर दिया. उनके चित्रों की प्रदर्शनियां मद्रास, पूना, वियना एवं शिकागो आदि नगरों में हुईं, जिससे उनकी प्रसिद्धि देश-विदेश में फैल गई. उन्होंने मैसूर, बड़ौदा, उदयपुर, त्रावणकोर आदि के राज-दरबारों के लिए अनेक कला-कृतियां बनाईं. अक्तूबर 1906 में त्रिवेंद्रम के निकट आट्टिंगल में उनका निधन हो गया. (चित्र सं. 18).

भारतीय फिल्म उद्योग के जनक दादा साहब फालके की जन्म-शताब्दी सन् 1970 को फिल्मी क्षेत्रों में अत्यंत उत्साहपूर्वक मनायी गई थी किंतु उनकी स्मृति में विशेष टिकट उनकी 101वीं वर्षगांठ पर 30 अप्रैल 1971 को निकाला गया. फालके ने कला भवन बड़ौदा में फोटोग्राफी की शिक्षा प्राप्त की. इसके पश्चात् उन्होंने अपनी पत्नी की सहायता से फिल्म निर्माण का कार्य आरंभ किया. वह अपनी फिल्मों के लेखक, कैमरामैन, निदेशक एवं संपादक आदि के सभी कार्य स्वयं करते थे. इस समय में उन्होंने कई लेख भी लिखे. उनका देहावसान सन् 1944 में हुआ. (चित्र सं. 10).

प्रसिद्ध बंगला चित्रकार श्री अवनींद्रनाथ ठाकुर की जन्म-शताब्दी के अवसर पर दिनांक 7-8-1971 को जो टिकट निकाला गया, उस पर उनकी एक कलाकृति अभिसारिका अंकित है. भारतीय कला के साथ ही श्री ठाकुर ने यूरोपीय, चीनी एवं जापानी कला का अध्ययन भी किया. इस महान् कलाविद् का देहांत सन् 1951 में हुआ. (चित्र सं. 4)

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती के शिक्षा गुरु स्वामी विरजानंद की 103वीं निधन-तिथि के अवसर पर दिनांक 14 सितंबर को गेरुए रंग का एक टिकट निकाला गया. विरजानंद का जन्म सन् 1778 में जालंधर के एक गांव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था. चेचक के कारण 5 वर्ष की आयु में ही वे दृष्टि-हीन हो गए. अचानक पिता का भी देहांत हो जाने के कारण विरजानंद संन्यासी हो गए. उन्होंने हरिद्वार, काशी, गया और कलकत्ता में भारतीय दर्शन व संस्कृत भाषा में निपुणता प्राप्त की. 14 सितंबर 1868 को देहावसान हुआ. (चित्र सं. 3)

प्राचीन ईरान के सम्राट कुरुश महान् ने सिंहासनारूढ़ होने पर एक घोषणा-पत्र द्वारा अपनी प्रजा को शांति, सुरक्षा, व न्याय की गारंटी दी थी. इस घोषणा पत्र की 2500वीं जयंती के अवसर दिनांक 12-10-1971 को काले रंग का एक विशेष टिकट निकाला गया, जिसपर मानव मुखाकृति वाले एक पंखदार पशु का चित्र अंकित है. (चित्र सं. 12)

अंतर्राष्ट्रीय बचत-बैंक कांग्रेस ने सन् 1924 में एक प्रस्ताव द्वारा यह घोषणा की थी कि प्रति वर्ष 31 अक्तूबर का दिन विश्व-मितव्ययिता दिवस के रूप में मनाया जाए. इस वर्ष इस दिन भारतीय डाक-तार विभाग ने जो विशेष टिकट निकाला, उसपर ग्लोब पर रखी एक बचत-पेटी में दो हाथों को सिक्के डालते दिखाया गया है. (चित्र सं. 14)

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) की रजत जयंती के उपलक्ष में 4-11-71 को भूरे रंग का जो विशेष टिकट निकाला गया, उस पर अजंता की गुफाओं के एक चित्र की अनुकृति अंकित है. इन गुफाओं के भित्ति-चित्रों की रक्षा के लिए यूनेस्को की एक योजना के अनुसार काम हो रहा है. (चित्र सं. 16)

इस वर्ष नेहरू जी की जन्म-तिथि (बाल-दिवस) पर 14-11-71 को जो विशेष टिकट जारी किया गया, उस पर 1971 में आयोजित शंकर की अंतर्राष्ट्रीय बाल-चित्र प्रतियोगिता में कुमारी गीता गुप्ता का नेहरू-स्वर्ण-पदक-प्राप्त चित्र अंकित किया गया. (चित्र सं. 8)

विश्व-विख्यात वैज्ञानिक चंद्रशेखर वेंकट रामन की प्रथम निधन-तिथि पर दिनांक 21-11-71 को नारंगी और भूरे रंग का सुंदर टिकट निकाला गया. श्री रामन का जन्म 7 नवंबर 1888 को तिरुचिरापल्ली में हुआ था. मद्रास के प्रेसीडेंसी कॉलिज में शिक्षा समाप्त कर आप कलकत्ता में भौतिक विज्ञान के आचार्य बने. यहीं पर 'रामन इफेक्ट' नामक खोज पर आपको 1930 में भौतिक विज्ञान का नोबल पुरस्कार मिला. बंगलोर की भारतीय विज्ञान अकादमी तथा रामन अनुसंधान संस्थान के द्वारा वह आजीवन विभिन्न वैज्ञानिक अनुसंधान में लगे रहे. आपकी मृत्यु 21 नवंबर 1970 को हुई. (चित्र सं. 11)

महाकवि रवींद्रनाथ द्वारा स्थापित विश्वभारती शांतिनिकेतन की स्वर्ण-जयंती के अवसर पर जो विशेष टिकट दिनांक 24-12-71 को निकाला गया, उस पर विश्वभारती के भवन के साथ ही कवींद्र रवींद्र का चित्र भी अंकित है. यह तीसरा भारतीय टिकट है, जिस पर श्री रवींद्रनाथ का चित्र अंकित है. (चित्र सं. 17)

भारतीय क्रिकेट के इतिहास में सन् 1971 एक चिरस्मरणीय वर्ष माना जाएगा, जबकि भारतीय क्रिकेट दल ने वेस्ट इंडीज एवं इंग्लैंड के विख्यात क्रिकेट दलों को उनकी ही भूमि पर पराजित कर रबर जीते. इस महत्त्वपूर्ण घटना की स्मृति में दिनांक 30-12-71 को हरे रंग का एक विशेष टिकट निकाला गया. (चित्र सं. 15)

उपर्युक्त विशेष टिकटों के अतिरिक्त इस वर्ष बंगलादेश के शरणार्थियों की सहायता हेतु धन एकत्र करने के लिए 5 पैसे का एक छोटा टिकट दिनांक 1-12-71 को निकाला गया, जिस पर सामान उठाए शरणार्थियों का चित्र है. (देखिए अंतिम टिकट).

—गजराज जैन
प्राध्यापक, हिंदी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान).

हास्य कहानी

डिब्बे की करामात

आज हायर सैकंडरी स्कूल का एनुअल डे!

एमरजेंसी के कारण इस वर्ष स्कूल की सजावट में काफी कंजूसी बरती गई थी, किंतु विद्यार्थियों के उल्लास में रत्ती भर भी कमी नहीं थी. प्रतियोगिताएं हो रही थीं. क्लासों की छुट्टी थी. विद्यार्थी प्ले-ग्राउंड, बैडमिंटन हाल, टी.टी. रूम में यूं घूम रहे थे, जैसे पार्लियामेंट में एम.पी.!

सदा की तरह आज भी दिन का प्रमुख आकर्षण था स्कूल के ड्रामेटिक्स क्लब द्वारा प्रस्तुत ड्रामा 'मूर्खों की टांग'. हॉल में विद्यार्थियों की भीड़ जुटने लगी थी.

ठीक दो बजे मंच का परदा उठा.

मंच पर ड्रामेटिक्स क्लब का सेक्रेटरी पंकज जादूगर के वेश में मौजूद था. उसने सिर झुका कर घोषणा की—"मेहरबान-कदरदान-साहेबान! खेद है कि किसी का' वजह हमें अपना पूर्व-घोषित ड्रामा—'मूर्खों की टांग'—कैंसिल करना पड़ रहा है."

हाल में 'ओह नो!' 'ओह नो!' के स्वर उठने लगे.

पंकज ने जोर से कहा—"अब आप ड्रामा कैंसिल होने का कारण भी सुन लीजिए. कारण है डालडे का एक डिब्बा—चार किलो वाला!"

हॉल में पहले से भी दुगने जोर का ठहाका लगा. हंसी का वेग थमते ही पंकज ने गंभीर स्वर में एनाउंस किया—"मेहरबान...साइलेंस! इस डिब्बे की हंसी उड़ाना चांद पर थूकना है. यह डिब्बा साधारण डिब्बा नहीं जो कबाड़िये चार आने में खरीद कर बारह आने में बेचते हैं. इस डिब्बे में ढाका के मशहूर जादूगर स्वर्गीय पाशे खां तातारी ने अपना जादू बांध रखा है. जो कदरदान चाहें, इस डिब्बे के थ्रू केवल दस रुपये में अपने स्वर्गीय बंधुओं से बात कर सकते हैं, चीत कर सकते हैं. पूछिए, कैसे?"

हॉल में शोर उठा—"कैसे? . . . कैसे?"

"वैरी इजी! . . . डिब्बे में दस रुपये डालिए और अपने स्वर्गीय बंधु का नाम पुकारिए. जादू के जोर से आपकी पुकारी आत्मा डिब्बे में आ जाएगी और डिब्बा आगे-पीछे झुक कर सिगनल देगा. तो मेहरबान, होशियार! अब आपके सामने आसमान से टपकता है पाशे खां तातारी का दूर-दूर तक मशहूर करामाती डिब्बा!"

फिर उस ने अपना मुंह ऊपर की ओर करके कहा—"ऐ, पाशे खां के डिब्बे, नीचे उतरो! आसमान में सेटेलाइट बनकर क्यों लटके हो! शरमाओ मत! यहां सब अपने ही आदमी हैं, आओ!"

दर्शकों की आंखें विस्मय से फटी रह गईं, जब आसमान से डालडा का एक चमचमाता डिब्बा बगैर किसी सहारे के धीरे धीरे नीचे उतरा मानो पैराशूट से बंधा हो. डिब्बा मंच के ऐन बीचों-बीच मेज पर 'सोफ्ट लैंडिंग' कर स्थिर हो गया. इस समय वह साइड के सहारे लेटवां पोजीशन में टिका था.

पंकज मंच के एक तरफ खड़ा हो गया. कोई भी दर्शक आत्मा से वार्तालाप करने के लिए न उठा. यह तो असंभव था कि किसी के किसी बंधु की आत्मा कभी रिलीव ही न हुई हो. वास्तव में बहुत से दर्शक तो इसे नाटक का ही एक भाग समझ बैठे. वार्तालाप के इच्छुक कई जनों की जेब में दस का नोट मौजूद नहीं था. आखिर वे फ्री में नाटक देखने आए थे, दस रुपये देकर आत्माओं से बतियाने नहीं.

पंकज ने दर्शकों को ललकारा—"कदरदान! . . . आपके सामने परलोक और इहलोक के बीच का टेलीफोन एक्सचेंज साक्षात हाजिर है.



बढ़िए, आत्माओं को ट्रंक-काल कीजिए. ऐसा स्वर्ण में जड़ा अवसर हरेक चौराहे पर नहीं मिलेगा!"

भीड़ की खुसर-फुसर शांत हो गई. दसवीं की सरिता उठी. मंच पर जाकर उसने डिब्बे को प्रणाम किया और उसमें दस का नोट डाल कर पुकारा—"रामो दादी!"

स्तब्ध दर्शकों के देखते-देखते डिब्बे ने आगे-पीछे लुढ़क कर सरिता की भेंट स्वीकार की. सरिता ने भरे कंठ से कहा—"दादी, यह तुम हो?"

जैसे आकाशवाणी हुई हो—"हां, मैं ही हूं!"

"दादी, तुम सचमुच आ गईं?"

"सरिता बिटिया, फिजूल बातों में टाइम वेस्ट न करो!"

"आहा दादी! तुम अंग्रेजी बोलती हो?"

"यहीं आकर सीखी है!"

"दादी, तुम ठीक-ठाक हो न?"

"बिलकुल . . . बहुत सुखी!"

"दादी, सत्या की मां तुम्हें मिलती है. वह दो महीने पहले बीमारी में यह पृथ्वी छोड़ कर चली गई."

"सत्या की मां को स्वर्ग एलाट हुआ है. मैं अभी नरक में हूं. बार्डर पर एक-दो बार जरूर दीखी है!"

दादी के नरक में होने की सूचना से सरिता को ऐसा आघात लगा कि वह मंच पर धम्म से बैठ गई. पंकज ने फुर्ती से उसे नीचे उतार दिया. आत्मा से वार्तालाप का साक्षात प्रमाण देखकर दर्शकों में हलचल मच गई. सभी जने एकाएक ही अपने स्वर्गीय बंधुओं से मधुर-मधुर वार्तालाप करने को लालायित हो उठे.

व्यवस्था को सुचारु रूप देने के लिए मंच पर ड्रामेटिक्स क्लब का मेम्बर श्याम प्रकट हुआ. वह एक ओर बैठ कर नाम लिखने लगा ताकि आत्माओं से वार्तालाप करने के इच्छुक कदरदानों की बारी बांधी जा सके.

पहला नंबर हरीश का था. उसने पंकज से झिझकते हुए कहा—"एक्सक्यूज मी!"

—अवतारसिंह



"एक्सक्यूजड! और कुछ?"

"मेरी दो गर्ल-फ्रेंड्स थीं—वीणा और नीलम."

"जरूर होंगी."

"वीणा को टी.बी. निगल गई, नीलम को एक्सीडेंट."

पंकज ने अफसोस प्रकट किया—"ओह! परमात्मा बिछड़ी आत्माओं को शांति प्रदान करे!"

"मैं दोनों को बारी बारी से बुलाना चाहता हूं. बीस रुपये एक साथ डाल दूं?"

"कोई हर्ज नहीं. करामाती डिब्बा अर्थमेटिक में बहुत तेज है!".

हरीश ने डिब्बे में दस-दस के दो नोट डाले और वीणा को आवाज दी. डिब्बा लुढ़कते ही हरीश का गला प्रसन्नता से रुंध गया—"वीणा, आखिर तुम आ ही पहुंचीं!"

"खबरदार! . . . मैं वीणा नहीं, नीलम हूं!"

हरीश का चेहरा एकदम फ्यूज हो गया—"नीलम हो! . . . मैंने तुम्हें तो अभी नहीं बुलाया!"

डिब्बे में से सुबकने की आवाज आई—"तुम मुझे पहले भी कहां बुलाते थे!"

"नीलम, प्लीज, मुझे गलत मत समझो."

"तुम हमेशा उस मुई वीणा के पीछे दीवाने रहे. मैं मूर्ख थी जो तुम्हारे आगे-पीछे घूमती थी!"

"यह तुम क्या कहती हो, नीलम? तुम्हारे कहने पर मैंने चौहान साहब के बंगले की कंटीली बाड़ फांदी और अमरूद के पेड़ पर चढ़ा. वहां माली ने पीट-पीटकर मेरा भुरकस निकाल दिया. हाय, तुम्हारी स्मरण-शक्ति को क्या हो गया!"

"आ-हा, तुम वीणा को बड़े-बड़े प्रेजेंट देते थे और मुझे अमरूदों पर टरकाते थे. मैं तुम्हारी नस-नस पहचानती हूं. तुमने हमेशा मुझे धोखा दिया. धोखा-धोखा-धोखा!"

आवाज धीरे-धीरे सिसकियों में डूबती चली गई. हरीश के मुंह से सर्द आह निकली. वह लौटने लगा तो पंकज ने चेताया—"वीणा से तो वार्तालाप कर लीजिए."

हरीश ने रोतड़े स्वर में उत्तर दिया—"नो थैंक्स! वह मुझे नीलम की फ्रेंडशिप को लेकर ताने देगी. हे भगवान, लड़कियां मरने के बाद भी नहीं बदलतीं!"

"आप के दस रुपये रिफंड नहीं होंगे."

"मेरा तो दिल ही टूट गया. दस रुपये लेकर चाटूंगा?"

"आप की स्वीट इच्छा! थैंक्स!"

●

अपनी-अपनी बारी से कई जनों ने आत्माओं से वार्तालाप किया और चलते बने. सदियों से बिछड़े बंधुओं का मधुर मिलन देखकर कई भावुक दिल लड़कियों की आंखें छलक आईं. समस्या उत्पन्न की आठवीं की राका ने. वह अपने स्वर्गीय अलसेशियन कुत्ते का भौंकना सुनना चाहती थी. तय हुआ कि कुत्ते की आत्मा तो बुला ही ली जाए; भौंके या नहीं, आत्मा की मर्जी है. आखिर अलसेशियन कुत्ते की आत्मा है. उसकी मर्जी के बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता.

आत्मा पधारते ही डिब्बा इस बुरी तरह कांपने लगा मानो उसमें दर्जन भर लंगूर नाच रहे हों. डिब्बा एक-दो बार इस तरह आसमान की ओर लपका गोया उड़कर ही दम लेगा.


टैबी
और
परीक्षाएं
परीक्षा को सिर्फ एक महीना रह गया है...
रमेश, पढ़ाई पर ध्यान दो, नहीं तो तुम्हें दंड मिलेगा।
क्या बात है, रमेश?
मैं थक गया हूं। मैं ध्यान लगाकर पढ़ नहीं पाता और परीक्षा बिल्कुल नजदीक है।
टैबी, तुम कितना तरोताज़ा दिखायी पड़ते हो। इसका राज़ क्या है?
राज़? एनर्जी टैब्स राज़ नहीं है।
यह लो कुछ टैब्स। एनर्जी टैब्स फ़ौरन शक्ति देती हैं।
और ये तुम्हें पढ़ाई पर ध्यान देने में मदद करेंगी।
आखिर परीक्षाएं आ गयीं...
यह खूब लिख रहा है। काश वह पास हो जाए।
और फिर नतीजा आ गया...
वाह! मैं पास हो गया। धन्यवाद टैबी।
धन्यवाद एनर्जी टैब्स को दो!
ग्लैक्सोज़-डी
एनर्जी टैब्स
थकान फ़ौरन मिटाती हैं!

पंकज ने घबरा कर पूछा—"मिस राका! आपका कुत्ता हड़का था?"

"नहीं तो."

"तो उसे अवश्य ही ल्यूकोमिया होगा. वरना आत्मा को इस उछल-कूद का यहां क्या काम!"

राका ने सहम कर पूछा—"ल्यूकोमिया क्या?"

"बहुत भयंकर बीमारी है. ल्यूकोमिया से पीड़ित आत्मा जिसके सिर पर से गुजर जाए उसे भी ल्यूकोमिया हो सकता है. ऐ फत्ते खां के डिब्बे, इस आत्मा को यूं निकाल फेंक जैसे दूध से मक्खी!"

तुरंत ही डिब्बे की उछल-कूद शांत हो गई. राका उदास हो गई कि उसके कुत्ते की आत्मा को ल्यूकोमिया जैसी खतरनाक बीमारी हो गई है.

●

सीनियर क्लास के रोशन ने अपने दादा जी की आत्मा को पुकारा. जैसे ही डालडा के डिब्बे ने गुदगुदी लाकर आत्मा के शुभागमन का सिग्नल दिया, रोशन हंसने लगा.

पंकज चीख उठा—"हा-हा क्या? बात करो. वरना दोनों लोकों के बीच का कनेक्शन आटोमेटिकली कट जाएगा!"

"जनाब, आप चुपके से मेरा दस का नोट डिब्बे से निकाल दीजिए."

"हर्गिज नहीं. आपके दादा जी की आत्मा डिब्बे में मौजूद है. आप वार्तालाप कीजिए."

"मुझे दादा जी से वार्तालाप करना होगा तो घर चला जाऊंगा. मेरे दादा जी इस समय पलंग पर लेट कर खर्राटे भरा करते हैं."

हाल में 'फाड-फाड' की ध्वनि उठने लगी थी. एकाएक पंकज रोशन पर फट पड़ा—"डैम-फूल! तू जानता है, तूने जीवित शरीर में से आत्मा निकलवा कर कितना बड़ा रिस्क लिया है. जा, दुम दबाकर दौड़ता चला जा, घर में जाकर देख, आत्मा वापस तेरे दादाजी के शरीर में ही पहुंची या कहीं रास्ते में भटक रही है?"

रोशन का चेहरा भय से जर्द हो गया. यदि कहीं आत्मा रास्ता भूल गई, तब तो गहरा अनर्थ हो जाएगा.

रोशन बिजली की-सी तेजी से हॉल के बाहर भाग निकला.

पंकज ने दर्शकों को चेतावनी दी—"मेहरबान, बराए मेहरबानी किसी जीवित शरीर की आत्मा को न पुकारें. वरना उसके उसी शरीर में वापस लौटाने की गारंटी हमारी नहीं होगी."

नवीं की राधा ने एक चौकन्नी दृष्टि चारों ओर फेंकी और पूछा—"क्या आप हमारी हिन्दी टीचर की आत्मा तीन दिन के लिए डिब्बे में रख सकते हैं?"

पंकज ने उत्तर दिया—"नहीं, आत्मा अपनी इच्छा से आती है."

नवीं के बहुत से विद्यार्थी चिल्लाए—"हम डिब्बे को मुंहमांगे रुपये देंगे."

"नहीं साहेबान! यंत्र का दुरुपयोग होते ही इसका जादू टूट जाएगा. फिर यह केवल डालडा का चार किलो वाला खाली डिब्बा रह जाएगा."

राधा ने तर्क दिया—"यह डिब्बे का दुरुपयोग नहीं, सबसे भारी सदुपयोग होगा. इससे कम-से-कम डेढ़ सौ स्टूडेंट्स का भला होगा!"

पंकज ने अंतिम रूप से बात समाप्त कर दी—"फत्ते खां तातारी की आत्मा डिब्बे के इस उपयोग को कभी पसंद नहीं करेगी."

नवीं कक्षा के तमाम विद्यार्थियों के चेहरे मुरझा गए. अपनी अपनी बारी से आकर दर्शक आत्माओं से वार्तालाप करते रहे.

दसवीं के सतीश ने अपने बड़े भाई मनोहर की आत्मा को पुकारा. आत्मा ने डिब्बा ठुकका कर दर्शन दिए, तो वह बेतहाशा हंसने लगा. बोला—"मैं तो अपने डैडी का इकलौता बेटा हूं!"

विकट स्थिति उत्पन्न हो गई. पंकज ने क्रोध से पैर पटक कर गरजा—"आज के दिन ढाका के जादूगर फत्ते खां तातारी के प्रसिद्ध प्लानचेट का मजाक उड़ाने की यह दूसरी मनहूस कोशिश है. उसी प्लानचेट की, जिसके लिए जनरल टिक्का खान ने पूरे तीन दिन फत्ते खां की कोठी की तलाशी ली, किंतु अपने स्वामी की क्रूर हत्या के पश्चात् यह पवित्र प्लानचेट स्वयं उड़ कर फत्ते खां के मित्र, भारत के जादूगर मंगलू मदारी की शरण में आ गया, जिन्होंने मेहरबानी करके इसे चार घंटे के लिए हमें लोन दिया."

●

हाल में ऐसा सन्नाटा था कि सुई गिरने की आवाज भी स्पष्ट सुनाई देती. सतीश ने मरा-सा विरोध किया—"इसके पीछे कोई गहरा जाल है!"

पंकज दहाड़ा—"व्हाट जाल! कसम इसी डिब्बे की, यदि इसमें फत्ते खां तातारी की आत्मा सरप्राइज विजिट मार दे तो सबसे पहले तुम्हारी मरम्मत करे. तुम्हारी जानकारी के लिए बता दूं कि मजाक का उत्तर मजाक में देने के लिए इधर-उधर भटकती आत्माएं यंत्र में आ घुसती हैं. नाऊ गेट अवे!"

सतीश यह लताड़ सुनकर चुपचाप चलता बना. उसी समय मंच पर एक धमाका हुआ और बादलों की गड़गड़ाहट जैसी आवाजें हुईं. हाल में पैनिक फैल गया. पंकज बोला—"मेहरबान-कदरदान! घबराइए मत! वही बात हुई जिसका मुझे डर था. अपने यंत्र का मजाक उड़ता देख महान जादूगर फत्ते खां तातारी की महान आत्मा यू. एस. ए. से यहां पधार रही है!"

डिब्बा दो-तीन बार हवा में उछल कर बैठ गया.

पंकज ने डिब्बे को आदेश दिया—"ऐ फत्ते खां! हवा में उछल कर कदरदानों को सलाम दो."

संसार का आठवां आश्चर्य! न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के सुप्रसिद्ध सिद्धांत पर दुलत्ती मारकर डिब्बा बगैर किसी सहारे लटक गया.

आत्माओं से बातचीत करने वालों का सिलसिला फिर चल निकला. चार बजे तक हॉल में सबकी जेबें खाली हो चुकी थीं.

अंत में पंकज ने भरे कंठ से कहा—"मेहरबान! अब फत्ते खां तातारी समेत अपने डिब्बे के विदा होता है!"

दर्शकों के देखते-देखते डिब्बा उड़ा और मंच के ऊपर जाकर आंखों से ओझल हो गया. लड़कियों के दिल भर आए.

●

विद्यार्थी बाहर निकलने के लिए खड़े ही हो रहे थे कि सब वापस अपने अपने स्थान पर डट गए. मंच पर प्रिंसिपल की भव्य मूर्ति दीख रही थी. प्रिंसिपल ने तार से लटकते माइक को पकड़ कर मुंह के सामने रखा और एनाउंस किया—"इस इंद्रजालनुमा नाटक में प्रथम पुरस्कार जीता है—एलेवन की कुमारी अंजलि चौधरी ने, जिसने सफलतापूर्वक छप्पन नानी-दादियों की आत्माओं की नकल उतारी!"

मंच पर पड़ी मेज के आगे तना परदा हटा कर अंजलि निकली और मुस्करा कर मंच के एक ओर खड़ी हो गई.

प्रिंसिपल ने घोषणा जारी रखी—"दूसरा पुरस्कार टेंथ के पंकज गुप्ता और तीसरा पुरस्कार टेंथ के ही असंग भाटिया को मिला है. पंकज का अभिनय तो आपके सामने था ही. असंग ने परदे के पीछे से डालडा के मासूम भोले-भाले डिब्बे को घोड़े की दुम के लगभग इनविजिबल बालों के सहारे तरह तरह के करतब दिखाने पर विवश किया. इसके अतिरिक्त अन्य सभी अभिनेताओं को सर्टिफिकेट आफ मेरिट दिया जाता है."

मेज के नीचे से एक के बाद एक पूरे नौ जनें निकले. इतने ही अभिनेता दर्शकों में से निकल कर मंच पर आ धमके.

जनता के सामने अब दो ही रास्ते थे—सिर धुने या तालियां पीटे! अगले ही क्षण हॉल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा.

सहसा प्रिंसिपल को जैसे कुछ याद आया—"आज की सारी कलेक्शन हम नेशनल डिफेंस फंड में दे रहे हैं. जिन विद्यार्थियों ने अपने स्वर्गीय बंधुओं से बातचीत की है, उनकी रसीदें साथ-साथ तैयार होती रही हैं. वे हेड क्लर्क मोतीराम से अपनी रसीदें लेना न भूलें."

हाल में खिसयाई हंसी गूंजी, सबको जबरदस्ती नेशनल डिफेंस फंड जो देना पड़ा था. ●

मैकेनिकल इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट,
आई. आई. टी., नयी दिल्ली-29.

'वर्जित फल' (स्थायी स्तंभ) एक परिचर्चा :

भारतीय विद्यालयों में यौन-शिक्षा

एक प्रश्न

• डा. शशि शर्मा

'सैक्स' शब्द का पहला अर्थ जो मस्तिष्क में उभरता है, वह है—नर-नारी का प्रकृत संबंध, जिसे चाहे सामाजिक धरातल पर विवाह की संज्ञा दे दीजिए और चाहे तो वैयक्तिक स्तर पर उच्छृंखलता एवं उन्मुक्तता का आरोप लगा दें. अंतर बात में नहीं, स्तर में पड़ता है. एक वस्तु एक स्तर पर सर्वग्राह्य है, वही वस्तु अन्य स्तर पर अग्राह्य हो जाती है, वर्जित हो जाती है. वस्तुत: वर्जना स्वयं में एक ऐसा भाव है, जिसमें निषेध के साथ-साथ कहीं उसे तोड़ने की प्रेरणा भी छिपी रहती है. यह भाव वयस्कों या प्रौढ़ों को इतना उत्तेजित नहीं करता, जितना किशोरों को. किशोरावस्था भविष्य की तलाश है. इस तलाश का मार्ग कभी वर्जनाओं के झरोखों से गुजरता है और कभी खुले विरोध के प्रांगण से. यदि गंभीरता से सोचा जाए तो वर्जना एक ऐसी सुरंग है, जो किशोर के जीवन में अंदर ही अंदर उसे कहीं का कहीं ले जाती है. क्या इन सुरंगों का निर्माण रोका जा सकता है? इस पर कुछ भी कहने से पूर्व किशोरों का मत जान लेना नितांत आवश्यक है.

•

सबसे पहले जब नीलम खुराना से इस विषय पर बात की गई, तो 'सैक्स' का नाम सुनते ही वह सकते में आ गईं. लेकिन जब बात घुमा-फिरा कर पूछी गई तो उन्होंने 'सैक्स' की विधिवत् शिक्षा का समर्थन किया. उनके अनुसार यह शिक्षा नवीं कक्षा से प्रारंभ की जानी चाहिए, क्योंकि इस अवस्था को ही सही अर्थों में किशोर आयु कहा जा सकता है. किशोरों के मन में सैक्स-भावना के जागरण के पीछे उत्तेजक साहित्य और 'ए' क्लास फिल्में छिपती हैं. वर्जना का द्योतक 'ए' शब्द उसे किसी भी कीमत पर फिल्म को देखने के लिए प्रेरित करता है. यही बात 'सैक्स' के सम्बन्ध में कही जा सकती है. इसके विषय में बड़ों द्वारा दुराव-छिपाव किशोरों को गलत मार्ग पर अग्रसर करता है. अत: उसे इस मार्ग से हटाने के लिए शिक्षा अनिवार्य है, जो अत्यन्त सभ्य एवं संयमित ढंग से दी जानी चाहिए. शिक्षा का स्थान पूछे जाने पर कु. नीलम ने उत्तर दिया कि यदि माता पिता शिक्षित एवं आधुनिक हैं, तो यह कार्य उन्हें ही करना चाहिए. इसके अभाव में यह उत्तरदायित्व शिक्षकों पर आ पड़ता है.

इसके पश्चात् तिमारपुर कालेज की सपन जैन से चर्चा करने पर ज्ञात हुआ कि उनके अनुसार किशोरों को इस फिसलनभरी आयु में किसी भी अप्रत्याशित स्थिति से उबारने के लिए यौन शिक्षा अनिवार्य है. अन्य विषयों की भांति इसे भी एक विषय की तरह पढ़ाया जाना चाहिए. घर में शिक्षा के सम्बन्ध में इनका कहना है कि अभी भारतीय समाज में अभिभावक इतने उदार नहीं हैं, जो स्पष्ट रूप से ये सब बातें बता सकें.

इस विषय पर सर्वाधिक स्पष्ट रूप से चर्चा करने वाले 19 वर्षीय प्रवीण गौतम के अनुसार यौन-शिक्षा कालेज स्तर पर दी जानी चाहिए, क्योंकि इस अवस्था तक आते-आते यौन संबंधी सूक्ष्म बातों को समझने की परिपक्वता आ जाती है. श्री गौतम ने सर्वाधिक बल उचित समय पर दिया, अर्थात् किशोर को उसके जीवन में संभावित पतन से पूर्व ही सचेत किया जाना चाहिए, क्योंकि प्रकृति-प्रदत्त इस स्वाभाविक आकर्षण का जाल दुर्भेद्य होता है. अत: इस जाल के निर्माण से पूर्व ही, उसे भेद दिया जाना चाहिए. अपना उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि उचित निर्देशों के अभाव में वह स्वयं इस जाल में फंस चुके हैं. वास्तव में जिस वस्तु के लिए उन्हें अयोग्य करार दिया गया है, उसके लिए वे सर्वथा योग्य सिद्ध होने का प्रयत्न करते हैं. इसके पीछे कहीं अपने अस्तित्व को कायम रखने की भावना भी छिपी होती है.

•

अशोक दुबे 'सैक्स' शब्द को एक अलौकिक सुख के रूप में ग्रहण करते हैं, जिसका उपभोग विवाह पश्चात् किया जाना चाहिए. उनके अनुसार आज किशोर के लिए सैक्स का अर्थ दाल-रोटी से अधिक नहीं रहा. इसलिए आज आवश्यक है कि किशोरों को इसके सुख एवं जीवन में इसके महत्व की शिक्षा दी जाए. आज के युवा-वर्ग में फैली उच्छृंखलता से क्षुब्ध अशोक दुबे के विचार से, विवाह से पूर्व परस्पर स्पर्श भी पाप है.

•

अंत में हमने एक और किशोर से बात की, जिसने अपना नाम गुप्त रखने की प्रार्थना की है. जब उससे इस विषय में सीधा प्रश्न किया गया, तो उसने अपने चारों ओर देखते हुए दबी जबान से स्वीकार किया कि उसमें सैक्स संबंधी बातों के प्रति एक सुखद लालसा है, जिसकी पूर्ति वह फिल्मों के गंदे पोस्टर, अर्द्ध नग्न युवतियों के चित्र तथा आती-जाती लड़कियों पर फबतियां कसने में करता है. इसकी शिक्षा के सम्बन्ध में वह स्पष्ट रूप से कुछ बता नहीं पाया. उसे बस ये बातें अच्छी लगती हैं. इनके परिणामों से वह अनभिज्ञ है.

किशोर और किशोरियों से की गई उपर्युक्त चर्चा के आधार पर कुछ तथ्य उजागर होते हैं: पहला है—सैक्स एक नैसर्गिक चाह है, जो अवस्था के साथ-साथ एक आवश्यकता के रूप

से परिवर्तित होती जाती है. उत्सुकता उसे चोरी-छिपे ताक-झांक की ओर प्रेरित करती है. ऐसा करते हुए जब कभी वह पकड़ा जाता है, तब उस पर 'वर्जना' का 'लेबिल' चिपका दिया जाता है. अवस्था के साथ-साथ 'वर्जना' की डोर कसती है तथा उसे तोड़ने के अवसर बढ़ते जाते हैं. उधर घर की चारदीवारी से निकलकर किशोर बाहर की नई दुनिया में प्रवेश करता है. वहां सिनेमा, अश्लील पुस्तकें, मित्र-मंडली आदि का उत्तेजक परिवेश उसकी प्रारंभिक जिज्ञासा को लालसा में परिवर्तित कर देता है. अब तक वह जिसे केवल जानना चाहता था, उसमें उसके उपभोग की इच्छा भी जाग्रत हो जाती है. कभी-कभी तो अपने साहस के प्रदर्शन के लिए वह अपने ज्ञान का दुरुपयोग करना प्रारंभ कर देता है. दूसरी ओर सामाजिक, धार्मिक तथा नैतिक मान्यताएं उसके हृदय में एक अपराधी भावना उत्पन्न कर देती हैं, और वह उन मान्यताओं को चुनौती के रूप में धड़ाधड़ तोड़ता जाता है.

वह तोड़-फोड़ एक विस्फोट का रूप धारण कर लेती है. जब-तब सुना जाता है कि अमुक लड़की ने मातृत्व की अनचाही स्थिति के कारण घबरा कर आत्महत्या कर ली, अथवा यौवन के अंधकारमय भविष्य के कारण अमुक लड़के ने नशीले द्रव्यों का उपयोग आरंभ कर दिया है. बंद दुनिया में रहने वाला अभिभावक-वर्ग इन समाचारों से चौंक कर अपना सिर धुनते हुए उन्हें भ्रष्ट घोषित कर देता है, पर वास्तव में दोष है किसका?—किशोर का, वातावरण का अथवा अभिभावक का? व्यापक धरातल पर इसका अवलोकन करें तो आज का किशोर पहले की अपेक्षा अधिक परिपक्व बुद्धि रखता है. आज 15 वर्ष का किशोर काम के विषय में प्रायः सभी कुछ जान चुका होता है, जबकि उसका विवाह सामान्यतः 25 वर्ष की अवस्था में होता है. अब प्रश्न उठता है कि वह इन 10 वर्षों के अंतराल को कैसे काटे? कुछ लोग इसके लिए संयम का मार्ग सुझाते हैं, किंतु पहले तो किशोर संयम से अनभिज्ञ होता है, दूसरे आज के उत्तेजक परिवेश को देखते हुए इसकी अधिक सार्थकता दृष्टिगोचर नहीं होती. क्योंकि काम जीवन से अनेक स्तरों पर जुड़ा हुआ है. सामाजिक धरातल पर, जिसे विवाह की संज्ञा दी जाती है, व्यक्तिगत स्तर पर वही काम कहलाता है. अतः जीवन के किसी भी स्तर पर सेक्स से कट जाना संभव नहीं जान पड़ता. तो फिर, किशोरों की इस कामोत्सुकता को क्या मोड़ दिया जाए, जिससे वे जीवन की इस अमूल्य निधि के प्रति अप्रत्याशित स्थितियों में विश्वास न खो बैठें. यह माना गया है कि जिज्ञासा को शांत कर देना ही उसका उचित उपचार है. इसके विपरीत यदि भय और वर्जना के द्वारा उसे दबाने का प्रयत्न किया जाए तो वह कुंठा का रूप धारण कर लेती है. अतः इस दृष्टि से 'सेक्स' की शिक्षा अनिवार्य हो जाती है. किंतु वह शिक्षा किस स्तर पर एवं किस अवस्था में दी जाए—यह विचारणीय है. जहां तक शिक्षा का संबंध है, इस विषय में सभी एकमत हैं कि यौवन की देहरी पार करने से पूर्व ही आने वाले प्रांगण के ऊंचे-नीचे तल से किशोर को अवगत करा दिया जाए, शरीर-विज्ञान के आधार पर जीवन में इसके महत्व का ज्ञान कराते हुए, उसमें स्वस्थ-जीवन के प्रति आस्था जाग्रत करनी चाहिए. इस दिशा में लड़कियों को विशेष रूप से सामाजिक परिवेश में शिक्षा दी जानी चाहिए. अधिकांश समस्याएं दो पीढ़ियों में परस्पर संकोच, अविश्वास, अनास्था, असहिष्णुता के कारण ही उत्पन्न होती हैं. और फिर हमारे यहां कहा भी गया है—

'प्राप्तेतु षोडशे वर्षे पुत्रम् मित्रम् समाचरेत्'

अतः आवश्यकता है कि बड़ों के प्रति आस्था रखते हुए किशोर अपनी समस्याओं का समाधान करा सकें. इसके लिए जीव-वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, शिक्षाशास्त्रियों को आमंत्रित करके भारतीय परिवेश के अनुरूप किशोरों के लिए यौन-शिक्षा की रूपरेखा तैयार होनी चाहिए. ●

141, कटरा नवाब, दरीबा कलां, दिल्ली-6

इस अंक में संपादकीय निष्कर्ष के साथ—'भारतीय विद्यालयों में यौन-शिक्षा ?—एक प्रश्न'—परिचर्चा समाप्त की जा रही है. पूर्वघोषणा के अनुसार, आगामी अंक से—"छात्र राजनीति में भाग लेने के लिए स्वतन्त्र हैं ?"—विषय पर विचार-विमर्श आरंभ होगा.

—संपादक

संपादकीय निष्कर्ष

विद्य-विद्यालयों में यौन-शिक्षा का प्रश्न गत वर्षों में उठाया गया था. उस पर पर्याप्त कानाफूसियां और जन-चर्चा तो हुई, परंतु गंभीरतापूर्वक विचार किए जाने से पूर्व ही यह प्रश्न लोप होकर रह गया. तदनंतर 'पराग' के 'वर्जित-पौध' स्तंभ के अंतर्गत इस विषय पर अनेक विचारशील विद्यार्थियों और प्रौढ़ों के मत-सम्मत आमंत्रित किए गए और यथासंभव उनमें से पर्याप्त को प्रकाशित भी किया गया.

परिचर्चा में भाग लेने वालों में से अधिकतर का मत था कि यौन-शिक्षा आरंभ होनी चाहिए. कुछ-एक ने विचार व्यक्त किया था, 'होनी तो चाहिए, परंतु संभलकर.' इसीलिए ऐसे केस भी सामने आए, जिनमें यौन-शिक्षा के विरुद्ध आवाज उठाई गई थी. यहां यदि हम यह मानकर चलें कि अधिक मतों के कारण यौन-शिक्षा लागू कर दी जाए, तो निरी मूर्खता होगी. क्योंकि जनसाधारण को प्रबुद्ध विचारकों की श्रेणी में तो नहीं रखा जा सकता. हां, जनसाधारण की बात की पुष्टि के लिए कुछ तर्क-संगत विचार पढ़ने को मिले, जिनसे यह अवश्य प्रतीत हुआ कि यौन-शिक्षा का प्रश्न जनजीवन में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है.

'यौन-शिक्षा तो हो, किंतु संभलकर'—यह बात कुछ समझ में आती है. भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में पाश्चात्य सभ्यता और फैशन औचित्य की किस सीमा तक ग्राह्य है—यह अवश्य विचारणीय प्रश्न है—यानी प्रश्न है उनकी सीमा निर्धारित करना, उन्हें एक सिरे से वर्जित करार दे देने का नहीं.

परंतु पाश्चात्य संस्कृति (या पर-सुख में आत्म-सुख के स्वप्न टटोलना) कई बार दूर के ढोल का सुहावना स्वर भी सिद्ध होता है, जिसकी पोल खुलने पर हकीकत का पता चलता ही है.

'सेक्स' प्रायः अविवाहितों के लिए रहस्यमय तिलिस्म बना रहा है, और इस तिलिस्म की चकाचौंध यदाकदा गलत दिशाओं की ओर बढ़ने की मायावी 'प्रेरणा' भी देती है. इसके निवारण के लिए जितनी जानकारी अविवाहितों के लिए आवश्यक है—वास्तव में वही भारतीय विद्य में यौन-शिक्षा के अंतर्गत ग्राह्य है, क्योंकि रहस्य सदा ही अनुचित जिज्ञासा और उत्सुकता का प्रेरक-उत्प्रेरक बना रहा है. तब 'माया' के इस मकड़ीजाल में उलझने से पूर्व इसकी थोड़ी-बहुत जानकारी आवश्यक प्रतीत होती है जो आंशिक रूप से 'अकुश लगे वातावरण' में भी प्रायः किशोर-किशोरियां परस्पर सहशिक्षा के जगत् में विचरण करते हुए जाने-अनजाने प्राप्त करते ही रहते हैं. किंतु इस जानकारी के साथ कभी-कभी अवांछित प्रयोग भी जुड़ जाते हैं और उन प्रयोगों में कुछ जीवन अकारण नष्ट हो जाते हैं.

—संपादक



टेढ़ी नज़र

□ पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय,
ढाई आखर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय.

संत बायरन

कहते हैं महाराज जनक पंडितों के पंडित थे. यह भी कहते हैं शहंशाह अकबर ने ज्ञान-विज्ञान के सागर को इतना मथा कि उस में से भी रतन निकाल लिये. हम नहीं मानते. सबूत क्या है? इतिहास-पुराण में कहीं ऐसा देखने-सुनने को नहीं मिलता कि उनके पास कोई डिग्री थी. जब तक कोई विश्व-विद्यालय उन्हें बाकायदा डिग्री प्रदान न कर दे, तब तक हम ऊपर के दोहे को भी कबीर का कैसे मान सकते हैं? सिवा संत बायरन के कौन यह बात इतनी प्योर अंडरस्टैंडिंग के साथ कह सकता था?

उस दिन एक दोस्त आ गए. कहने लगे कि भई किशोरीलाल, भगवान ने जो भी चीज पैदा की है, खूब सोच-समझ कर पैदा की है—और जो नहीं की, वह भी खूब सोच-समझ कर पैदा नहीं की. हमें फ़ौरन छींक आ गई. होता यह है कि जब हम कोई एब्स्ट्रैक्ट सिद्धांत की बात सुनते हैं, तो हमें फ़ौरन नाक में सुरसुरी महसूस होती है, और छींक आ ही जाती है. ऊपर के दोहे पर हमें कई बार छींक आई. खैर, हमने पूछा—माजरा क्या है? कहने लगे कि बात का फैलाव यों है—कि भगवान ने यह अच्छा ही किया कि आपको भैंगा बना दिया. अगर आपकी दोनों आंखों की नजरें सीधी-सीधी ही पड़तीं, तो आपको वे हरकतें कैसे नजर आतीं, जो आपकी नजरें बचा कर दुनिया करती रहती है? यह तो आपकी नजर का कमाल है कि दुनियावाले समझते हैं आप देख किसी और तरफ़ रहे हैं, और आपकी दूसरी आंख चट से अपना काम कर जाती है! इतिहास गवाह है कि बड़ी-से-बड़ी टेलेंट किसी-न-किसी इनफ़ीरियोरिटी से पैदा हुई है. अगर सुकरात की घरवाली उसके अंदर इनफ़ीरियोरिटी कांप्लेक्स पैदा न करती, तो क्या वह इतना मशहूर फ़िलासफ़र होता?

हमने अपने उस दोस्त की बलैया ली. वह और भी खुश हुआ; कहने लगा—डटे रहो. अगर यही हाल रहा, तो एक-न-एक दिन तुम्हें डिग्री भी दिलवा देंगे. हमने कहा, कैसे? किस यूनिवर्सिटी की नजर इतनी टेढ़ी होगी कि हमें डिग्री प्रदान कर देगी? बोले—फ़िकर न करो. वह दिन आने ही वाला है जब डाक्टरेट की डिग्रियां बारह आने किलो की रद्दी में बिकेंगी! जिस दिन राजनीति में प्रवेश प्राप्त करने की तरफ़ से तुम्हारा इनफ़ीरियोरिटी काम्प्लेक्स जाता रहेगा, उस दिन तुम्हें कम-से-कम विक्रम यूनिवर्सिटी से डाक्टर आफ़ लिटरेचर की डिग्री तो मिली-मिलाई रखी है.

सुन कर कोई खुशी नहीं हुई. हमारे मुंह से निकल ही तो पड़ा—"विक्रम यूनिवर्सिटी से? ना, भई, माफ़ करो."

"क्यों?" वह चकरा कर बोले. "विक्रम यूनिवर्सिटी क्या कोई घटिया यूनिवर्सिटी है?"

हमने कहा कि यह बात नहीं. विक्रम यूनिवर्सिटी हालांकि अपनी उदारता में पंजाब यूनिवर्सिटी को भी मात दे गई है, और विद्यार्थियों की सहूलियतों का ज़रूरत से ज्यादा ख्याल रखती है, मगर उसकी डाक्टरेट की डिग्री में हमें ज़रा शंका पैदा हो गई है. अभी सत्ताइस फ़रवरी की बात है—मान्यवर डॉक्टर गोपालस्वरूप पाठक, वाइस प्रेसीडेन्ट, उज्जैन में यूनिवर्सिटी के कन्वोकेशन में एड्रेस कर रहे थे. जब वह विद्यार्थियों को बता चुके कि उन्हें सरकारी नौकरियों के पीछे नहीं भागना चाहिए—कि सरकारी नौकरी पाना ही परीक्षाओं में सफलता का चरम उद्देश्य नहीं होना चाहिए—कि उद्योग-धंधों के क्षेत्रों में, और दूसरे अनेक क्षेत्रों में विद्यार्थियों को खपाने लायक काफ़ी गुंजाइश है, और ऐसी ही कुछ वे बातें जो आम तौर से कन्वोकेशन एड्रेस में कहनी चाहिए—तो यूनिवर्सिटी के अधिकारी लोग इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने 'डाक्टर आफ़ लिटरेचर' की आनरेरी डिग्री उनके ऊपर कन्फ़र करनी चाही. वह तो कहो संयोग से पाठक जी पहले से ही डाक्टर थे, वरना बड़े बड़े ऋषि-मुनि मेनका के सामने डिगते देखे गए हैं! जो भी हो, उन्होंने साफ़ इनकार कर दिया—ठीक उसी तरह, जिस तरह बर्नार्ड शा ने यह कह कर ऐसी ही एक भारतीय यूनिवर्सिटी-डिग्री लेने से इनकार कर दिया था कि उनके देश में बिना मेहनत किए उसका फल मिलने का चलन नहीं है—यह कि इस तरह की डिग्रियां बांटना उन विद्यार्थियों के मुंह पर करारा तमाचा है जो इसके लिए एम. ए. तक की पढ़ाई में लोहे के चने चबाते हैं, सोने के चने बिखेरते हैं, और अंधाधुंध रिसर्च करते हैं, थीसिस लिखते हैं (भारत में लिखवाते भी हैं! यह वह नहीं जानते थे)!

सुन कर हमारे परम मित्र की भौंहें पहले तो तनिक कुंचित हुईं. फिर धीरे धीरे एक कुटिल मुस्कान उनके होठों पर थिरक आई. आहिस्ता से बोले, "दोस्त किशोरीलाल, इस भरम में न रहना. अगर तुम्हारी नजर का यही हाल रहा, तो भगवान कसम, चवन्नी में भी डाक्टरेट की डिग्री तुम्हें नसीब नहीं होगी. अरे, डॉ० पाठक ऐसे थोड़े ही हैं कि घर में आती डिग्री को ठोकर मार कर बाहर निकाल देते. यह ठीक है कि ठीक उस वक्त, जब कि वह एक सोहना-सोहना-सा भाषण विशुद्ध हिंदी में विद्यार्थियों के गले के नीचे उतार चुके थे, सेंत-मेंत में डिग्री हासिल करने का मौका नहीं था. मगर जिस तरह आप अपनी घरवाली से कह देते हैं न कि रोटी दबा कर रख दियो, अभी भूख नहीं है, जब लगेगी तो खा लेंगे. बस उन्होंने भी यूनिवर्सिटी के नंबरदारों से यही कह दिया कि अभी नहीं. आगे चल कर आनरेरी डिग्री लेने के बारे में सोचेंगे. क्या समझे?"

अब क्या समझना बाकी रह गया था? हमारी नजर, जो लोगोंबागों के अच्छे-अच्छे कामों की तरफ़ ही जा कर अटक जाती है, उसके नीचे छपे हुए अक्षरों की तरफ़ उतरती ही नहीं, एक नए तरह के इनफ़ीरियोरिटी काम्प्लेक्स का शिकार हो गई. हमने फ़ौरन चवन्नी जेब से निकाली, और अपने परम मित्र से बोले, "भैया, अब तो डाक्टरेट की डिग्री मिले तो लियें, ना तो ना लियें. यह लो चार-अन्नया, किलो भर तो क्या, पर एक डिग्री ऐसी लाकर ला देना, जिस पर हम अपना नाम लिख लें.

मित्र बड़े ठठा कर हंसे. हंसते-हंसते ही उन्होंने चवन्नी हमारे हाथ से इस तरह खिसका ली, मानो वह जादू के ज़ोर से गायब हो गई हो. इसके बाद उन्होंने हमारे फ़रज़न्द-उल-ऐन को आवाज़ दी—"अबे चकरौंधे, कहां है तू? ले, दौड़ा-दौड़ा जा. एक प्याला चाय ले के आ मुक्कन की दुकान से. आज तो इस मांबदू ने चाय को भी नहीं पूछा!"

फिर वह हमारी तरफ़ मुखातिब हो कर बोले, "बेटा, पोथी बांचने में कुछ नहीं रखा. एक ढाई अक्षर 'प्रेम' के पढ़. फिर चुनाव में खड़ा हो. थोड़े-बहुत भाषण-वाषण झाड़. मस्के लगा और मस्के लगवा. तेरे चकरौंधे तक को डिग्रियां न मिल जाएं, तो नाम बदल देना!"

सो ही दोहा ऊपर लिखे रहे!

किशोरीलाल

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 39

परिणाम

सही उत्तर : 1—घर, 2—बाल, 3—मालती, 4—नमक, 5—घर, 6—बस, 7—प्रतिभा, 8—शांति, 9—आशा, 10—कला, 11—वन, 12—बड़ी, 13—नाले, 14—संगत

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 39 में इस बार कोई सर्वशुद्ध हल प्राप्त नहीं हुआ, अतएव प्रथम पुरस्कार एक अशुद्धि पर 2 प्रतियोगियों ने जीता, जिनमें से प्रत्येक को 350 रुपये प्राप्त हुए. इसी प्रकार दो अशुद्धियों पर 19 प्रतियोगियों को पुरस्कार मिले, जिनमें से प्रत्येक को 16 रुपये 67 पैसे प्राप्त हुए.

अगर आपको पूरा भरोसा है कि आपका नाम पुरस्कार विजेताओं की सूची में नहीं है, तो आप 20 अप्रैल 1972 से पूर्व प्रतियोगिता संपादक, 'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता, पो. बैग नं. 207, टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई-1 के पते पर एक पत्र लिखें. साथ में जांच की फीस के रूप में एक रुपया मनीआर्डर या पोस्टल आर्डर द्वारा भेजें. यदि आपका दावा सही होगा, तो पुरस्कार की राशि को उस के अनुसार फिर से वितरित किया जाएगा.

पुरस्कार की राशि अप्रैल 1972 में कार्यालय से भेजी जाएगी

एक अशुद्धि वाले दो विजेता : प्रत्येक को 350 रुपये

1—कुमारी मधु गुप्त, द्वारा श्री पी. एन. गुप्त, बी.ए., बी 33-बी, विजयनगर, दिल्ली-9; 2—मुकेशकुमार गांधी, नटवरलाल तुलसीदास, लोहे के व्यापारी, सदर बाजार, धमतरी, जिला रायपुर (म.प्र.).

दो अशुद्धियों वाले 18 विजेता : प्रत्येक को 16 रु. 67 पैसे

1—सुरेश अग्रवाल, चंदौसी; 2—हिमांशु चौधरी, चंदौसी; 3—नारायणप्रसाद चौरसिया, सागर; 4—एस. एम. दत्त, रांची; 5—चमेली देवी, चंदौसी; 6—बद्रीप्रसाद गुप्त, पो. नैनी (इलाहाबाद); 7—इंद्रजीत, तिनसुकिया (असम); 8—कुमारी पुष्पिंदर कौर, विजयनगर, दिल्ली-9; 9—कुमारी कुसुमलता, विजयनगर, दिल्ली-9; 10—कुमारी स्वर्णलता, चंदौसी; 11—विनोद मेहता, जोधपुर; 12—महेश, देहरादून; 13—उमेश शर्मा, देहरादून; 14—श्रीमती सुषमा शर्मा, देहरादून; 15—नीरज एस. ठक्कर, मद्रास-1; 16—कपिलकुमार उपाध्याय, सागर; 17—सरिता उपाध्याय, सागर; 18—कुमारी सुभाष बतराना, विजयनगर, दिल्ली-9.

जिन पुस्तकों से संकेत वाक्य लिए गए

1—एक और लाल तिकोन—ले. नरेंद्र कोहली—प्र. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली—पृ. 19; 2—उपर्युक्त—पृ. 20. 3—दो आंखों वाले चेहरे—ले. शोभा बीरा—प्र. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली—पृ. 159. 4—उपर्युक्त—पृ. 131. 5—उपर्युक्त—पृ. 126. 6—उपनिषद् पथ के राही—ले. अमन—प्र. आत्माराम एंड संस, दिल्ली—पृ. 97. 7—उपर्युक्त—पृ. 35. 7—उपर्युक्त—पृ. 25. 9—ये नए लोग—सं. मोहन चोपड़ा (स्व.)—प्र. आत्माराम एंड संस, दिल्ली—पृ. 29. 10—उपर्युक्त—पृ. 151; 11. समुद्र और लहरें—ले. शिवनारायण श्रीवास्तव—प्र. आत्माराम एंड संस, दिल्ली—पृ. 77; 12—उपर्युक्त—पृ. 44; 13—संशय का युग—ले. आनंद प्रकाश जैन—प्र. उमेश प्रकाशन, दिल्ली—पृ. 101; 14—उपर्युक्त—पृ. 73.

1000 रुपये के नकद इनाम

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 42

सर्वशुद्ध या निकटतम पूर्ति पर 700 रु.
न्यूनतम अशुद्धियों पर 300 रु.

इस प्रतियोगिता के संकेत-वाक्य विभिन्न हिंदी साहित्य से लिये गए हैं. इसलिए जो पाठक सबसे अधिक पुस्तकें पढ़ते होंगे, उनके लिए खेल-खेल में एक हजार रुपये जीतने का यह स्वर्ण अवसर है.

सामने के पृष्ठ पर 14 संकेत-वाक्य दिए गए हैं. प्रत्येक वाक्य में एक शब्द का स्थान रिक्त छोड़कर और दिया गया है. उसी पृष्ठ पर एक पूर्ति-कूपन है, जिसमें दो पूर्तियां दी गई हैं. जिस क्रमांक का संकेत-वाक्य है, प्रत्येक पूर्ति में उसी क्रमांक के आगे अकारादि क्रम से दो शब्द दिए गए हैं. उनमें से एक शब्द सही है, और दूसरा गलत. बस, आप गलत शब्द पर x का निशान लगा दीजिए.

'पराग उद्धरण प्रतियोगिता' के नियम और शर्तें

1—एक पूर्ति-कूपन में दो पूर्तियां दी गई हैं. आप एक पूर्ति भरें या दोनों—पूरा कूपन रेखाओं पर काटकर भेजना होगा. पूर्तियां 'पराग' में प्रकाशित पूर्ति-कूपनों पर ही स्वीकार की जाएंगी. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को काट कर दीजिए, और उसके नीचे पूर्ति क्रमांक आदि कुछ न लिखिए.

2—पूरे कूपन की दोनों पूर्तियों का प्रवेश-शुल्क 1 रुपया और केवल एक पूर्ति का प्रवेश-शुल्क 50 पैसे है. दोनों में से किसी भी पूर्ति को आप पहली मान सकते हैं. एक ही नाम से आप चाहे जितनी पूर्तियां भेज सकते हैं. एक ही लिफाफे में अनेक नामों और पतों की पूर्तियां भेजी जा सकती हैं. लिफाफे के अंदर रखी सभी पूर्तियों का सम्मिलित प्रवेश-शुल्क एक ही पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर, या नकद रसीद से भेज सकते हैं. किंतु ऐसी सभी पूर्तियों के नीचे कुल पूर्तियों की संख्या, उनके क्रमांक, और पूर्ति-कूपन में पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर की रसीद, या नकद रसीद का नंबर लिखना अनिवार्य है. पोस्टल आर्डर, या डाकखाने से मिली मनी आर्डर की रसीद, या नकद रसीद पूर्तियों के साथ अवश्य नत्थी करके भेजिए. डाक-टिकट या करेंसी नोट प्रवेश-शुल्क के रूप में स्वीकार नहीं किए जाएंगे. आप कार्यालय में नकद रुपया जमा करके या डाक-खर्च सहित मनी आर्डर भेज कर 50 पैसे मूल्य की चाहे जितनी नकद रसीदें प्राप्त कर सकते हैं और उन्हें अगले चार महीने तक, प्रवेश-शुल्क के रूप में, पूर्तियों के साथ नत्थी कर सकते हैं.

3—बंबई के प्रतियोगी अपनी पूर्तियां 'टाइम्स आफ इंडिया भवन' के प्रवेश द्वार पर बनी 'स्थानीय प्रवेश पेटी' में डाल सकते हैं. बंबई से या डाक से आने वाली सभी पूर्तियों के लिफाफों के खुलने वाली तरफ भेजने वाले का पता, तथा उनके पीछे यह पता लिखा होना चाहिए—'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. 42, प्रतियोगिता विभाग, पोस्ट बैग नं. 207, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बंबई-1. मनी आर्डर फार्मों और रजिस्टरी से भेजे जाने वाले लिफाफों पर 'पोस्ट बैग नं. 207' न लिखें. पोस्टल आर्डर क्रास कर दें. उसमें 'पाने वाले' के स्थान पर 'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. 42' और 'पोस्ट आफिस' के आगे—'बंबई-1'—लिखें. कृपया संपादक के नाम पूर्तियां या शुल्क न भेजें.

4—प्रथम पुरस्कार 700 रु. उन प्रतियोगियों को मिलेगा, जिनकी पूर्तियों में संकेत-वाक्यों के सही पूरक शब्दों पर निशान नहीं होंगे, और सभी गलत शब्दों पर निशान लगे होंगे. यदि ऐसी कोई पूर्ति प्राप्त न हुई, तो उसकी निकटतम अशुद्धियों वाली पूर्तियों पर प्रथम पुरस्कार दिया जाएगा. द्वितीय पुरस्कार 300 रु. प्रथम पुरस्कार प्राप्त पूर्तियों से निकटतम अशुद्ध पूर्तियों पर प्रदान किया जाएगा. समान अशुद्धियों के एक से अधिक विजेताओं को घोषित पुरस्कार बराबर बांटे जाएंगे.

5—अपना नाम और पता प्रत्येक पूर्ति-कूपन पर सुपाठ्य और स्पष्ट अक्षरों में लिखिए. डाक में खो जाने वाली, विलंब से प्राप्त होने वाली, या गंदी व कटी-फटी पूर्तियां प्रतियोगिता में शामिल नहीं होंगी.

6—सभी पूर्तियां कार्यालय में पहुंचने की अंतिम तिथि सोमवार, 8 मई, 1972 है. अपनी पूर्तियां भेजने के लिए अंतिम तिथि की प्रतीक्षा न कीजिए, क्योंकि अवधि के प्रारंभिक दिनों में ही पूर्तियां भेज देने से आप अनेक भूलों से बच सकते हैं. सर्वशुद्ध सम्बन्धी तथा संबंधित पुस्तकों व पुरस्कार विजेताओं की सूची 'पराग' के जुलाई 1972 के अंक में प्रकाशित की जाएगी.

7—प्रतियोगी को इस प्रतियोगिता से संबंधित प्रत्येक विषय में प्रतियोगिता संपादक का निर्णय अंतिम रूप से मान्य होगा. वैधानिक रूप से विवादास्पद विषयों में केवल बंबई न्यायालय को ही निर्णय देने का अधिकार होगा.

8—नियमों के प्रतिकूल तथा पूर्ति-कूपनों में आवश्यक विवरण से रिक्त कोई भी पूर्ति प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं की जाएगी. 'पराग' तथा संबद्ध प्रकाशनों के कर्मचारियों को इसमें भाग लेने का अधिकार नहीं होगा.

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं० 42 के संकेत-वाक्य

1. उसने पत्थर पर सिर रख कर अपनी आंखों को हाथों से ढक लिया और——लगा.
2. ——ने बग्घी के पायदान पर पैर टिकाए-टिकाए कहा, "तुम में ऐसी क्या खूबी है कि हम तुम्हें ही अपने मुंशी की जगह रखें?"
3. परन्तु एक तथ्य वे लोग भूल गए थे. वह यह कि——में भी एक चमत्कार होता है.
4. ऐसे समय यदि इस महाश्रेष्ठि ने अपने को——अनुभव करते हुए अपना सारा रहस्य खोल न दिया, तो इसका अर्थ होगा कि वह कोई वणिक न हो कर जादूगर है.
5. सबसे अधिक——यदि कोई व्यक्ति होता है, तो वह महत्वाकांक्षी होता है. रंक को स्वप्नगोचर महल का मोह अपने प्रासाद के प्रति राजा के मोह से अधिक होता है.
6. न जाने——केवल जनशक्ति ही काम दे जाए. स्त्रियां पराक्रम में किसी से पीछे नहीं रहती थीं.
7. सरदार की आंखों में आंखें डाल कर वह उठ खड़ा हुआ. फिर बोला, "न्यायाधीश ही बने रहोगे, या दुश्मन से दोस्त की तरह भी बात कर सकोगे? हम लोगों को तो विशेष रूप से इसका अभ्यास कराया जाता है-सभी——को."
8. उस व्यवसाय में तू लिप्त है, जो तेरे योग्य नहीं, किंतु——उसकी अनुमति है. ऐसे ही व्यवसाय में मैं लिप्त हूं, जो मेरे योग्य नहीं, और उसकी मुझे अनुमति भी नहीं.
9. मैंने अपना घर उजाड़ कर तुम्हारा घर——है. कौन अहसान फरामोश है? यह फैसला तुम स्वयं ही करो.
10. "इसमें दोष आपका है मेरा नहीं. मेरे——उसे भेजने से पूर्व इस बात का ध्यान आपको करना चाहिए था."
11. "मुश्किल नहीं, लेकिन मुश्किल से——वाली नहीं हूं. आज का मेला इन दोनों के नाते में लिखा गया है. कोशिश जारी रखनी है."
12. ——इमादन पास होता था और मुझे शक होता था कि लड़का हरामी तो नहीं है. भई, अगर हमारी औलाद है तो उसे एक साल पास और एक साल फेल होना चाहिए.
13. अब उसके शिकार के निकल भागने की आशा नहीं के बराबर रह गई थी. शिकारी जल्दी में नहीं था. वहीं अपनी जगह——वह मन ही मन शिकार के चारों तरफ एक मानसिक जाल बुन रहा था.
14. सरदार को लगा मानो एक पिंजरे से छूटा गुरिल्ला दांत निकाल कर उसकी तरफ धीरे-धीरे विश्वस्त गति से——चला आ रहा हो.

यहां से काटिए

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 42 (पूर्ति-कूपन)

शब्दों के प्रत्येक जोड़े में से जो शब्द आप गलत समझें, उस पर × का चिह्न बना दें. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को काट कर दें.

1	रोने	सोने	1	रोने	सोने
2	दाईं	नाईं	2	दाईं	नाईं
3	काम	नाम	3	काम	नाम
4	दीन	हीन	4	दीन	हीन
5	त्रस्त	व्यस्त	5	त्रस्त	व्यस्त
6	कहां	वहां	6	कहां	वहां
7	राजकुलों	राजपूतों	7	राजकुलों	राजपूतों
8	तुझे	मुझे	8	तुझे	मुझे
9	बनाया	बसाया	9	बनाया	बसाया
10	साथ	हाथ	10	साथ	हाथ
11	कतराने	घबराने	11	कतराने	घबराने
12	बड़का	लड़का	12	बड़का	लड़का
13	खड़ा	पड़ा	13	खड़ा	पड़ा
14	चढ़ा	बढ़ा	14	चढ़ा	बढ़ा

यहां से काटिए

यहां से काटिए

सभी पूर्तियां बंबई कार्यालय में पहुंचने की अंतिम तिथि :
सोमवार
8-5-1972

पूर्तियां भेजने का पता :
'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 42, प्रतियोगिता विभाग, पोस्ट बैग नं. 207, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बंबई-1.

पूर्ति क्रमांक : .... कुल पूर्ति संख्या : ....   पूर्ति क्रमांक : ..... कुल पूर्ति संख्या : ....

इस प्रतियोगिता में भाग लेते हुए मुझे प्रतियोगिता के सभी नियम व शर्तें पूर्णतया स्वीकार हैं.

नाम व पूरा पता (स्याही से) :——————

——————

——————

पोस्टल आर्डर / मनी आर्डर रसीद / नकद रसीद / का नंबर : ....

यहां से काटिए

"फोन की बात और है!"
--अजित वाडेकर



"हैलो," किसी ने फोन उठा कर उत्तर दिया.
"मुझे मिस्टर वाडेकर से बात करनी है."
"बोल रहा हूं," उधर से मदहोश आवाज में अंग्रेजी में कहा गया.
"मैं पत्रकार हूं। आप से मिलना चाहता हूं।"
"किस पत्रिका के लिए?"
"टाइम्स ऑफ इन्डिया प्रकाशन की पत्रिका के लिए."
"हूं", आवाज और नशीली हो गई, "डू यू नो एनीथिंग एबाउट क्रिकेट?"
फोन के दूसरी तरफ चोगा उठाए मैं बौखला कर रह गया. यह कैसा सवाल है!
"जी?" मैंने कहा, "अपने मुंह से कैसे कहूं... थोड़ा-बहुत जानता हूं. वैसे आपके स्कोर मुझे जबानी याद हैं."

इस पर दूसरी तरफ से लम्बी 'हूं' हुई. कुछ देर सोचा गया और, 'कल फोन करना,' कह कर अचानक चोगा रख दिया गया. मैं कुछ भी नहीं कह पाया. चोगा पकड़े रह गया. मुझे वाडेकर के कृत्य में दंभ और सामने वाले के प्रति लापरवाही लबालब भरी दिखाई दी.

अगले दिन मैंने फिर फोन मिलाया. श्रीमती रेखा वाडेकर ने कहा कि अजित आफिस जा चुके हैं. ऑफिस का नंबर मिलाया और बताया कि कैसे मैंने कल फोन किया था.

"कल फोन किया था...? हां हां! क्या अभी आ सकते हैं... तो आ जाइए."

मैंने फौरन ताम-झाम संभाला और स्कूटर को 'किक' लगाई. वाडेकर के स्वभाव को लेकर मेरी जो पहली राय बनी थी, उसे परखने का समय आ गया था.

वाडेकर के ऑफिस में मैं पहले आ चुका था, चर्चगेट इलाके में स्टेट बैंक ऑफ इंटरनेशनल की 'एडलफी' नाम की इमारत में.

वाडेकर के कमरे का दरवाजा खुला हुआ था और दूर से ही उनका चेहरा नजर आ रहा था. पास पहुंचकर मैंने अपना परिचय दिया तो वाडेकर मीठे-मीठे मुस्कुराए और बैठने के लिए कहा.

नथुने फड़का कर भी मैं दंभ और लापरवाही की बू नहीं सूंघ पाया, आखिर तक!

मैं जब आया, तब वह टेबिल पर सामने पंखा रखे, दोनों हाथ टेबिल पर टिकाए, टेलीविजन इंटरव्यू देने वाले अंदाज में बैठे हुए थे. मुझे सामने बिठाकर उन्होंने पंखे को घूमने वाली स्थिति में कर दिया, ताकि मुझे भी हवा मिल सके. और अंग्रेजी में हमारी बातचीत आगे बढ़ी.

अजित अपने छुटपन के किस्से सुनाने लगे. वह बहुत पढ़ाकू हुआ करते थे. रात को देर तक जाग-जाग कर पढ़ा करते. हमेशा क्लास में अव्वल आते. एस.एस.सी. (ग्यारहवीं बोर्ड) का इम्तेहान उन्होंने 79 प्रतिशत नंबरों से पास किया. बीज गणित में तो सौ में से सौ नंबर थे.

उन दिनों उन्हें खेल-कूद की कम ही सूझती थी और क्रिकेट जैसे समय चाटने वाले खेल की तो बहुत ही कम. एल्फिस्टन कॉलिज में पढ़ रहे अजित को किताबों से ही फुर्सत नहीं थी.

मगर संयोग का खेल, एक अंतर्विद्यालयीन मैच में एक दिन एल्फिस्टन कॉलिज की तरफ से एक खिलाड़ी कम पड़ गया. किसी ने अजित को ताड़ लिया. बालू गुप्ते से, जो बाद में टेस्ट खिलाड़ी बने, अजित से मैदान में उतरने के लिए कहलवाया गया. प्रलोभन दिया गया ढाई रुपये रोज के 'लंच अलाउंस' का. अजित प्रलोभन में आ गए. बारहवें खिलाड़ी बने ढाई रुपये जेब के हवाले करने लगे.

यों उनका क्रिकेट से वास्ता पड़ा और किसी एक दुर्बल क्षण में क्रिकेट ने उन्हें अपना शैदाई बना लिया. "यह मेरा 'फर्स्ट लव' था—प्रथम प्रेम," वाडेकर बोले.

अगला प्रेम उन्हें रेखा नाम की एक सौम्य-

उभरती प्रतिभाएं :
तैराक प्रदीप दे

किशोर तैराक प्रदीपकुमार दे ने भारत की विभिन्न तैराकी प्रतियोगिताओं (किशोर-वर्ग) में भाग लेकर 100 स्वर्ण व रौप्य पदक प्राप्त किए. प्रदीप की उम्र 18 वर्ष है.

प्रदीप अपने पिता श्री के. सी. दे की अनुप्रेरणा से बचपन से ही विभिन्न तैराकी प्रतियोगिताओं में भाग लेता रहा है. उसके पिता स्वयं एक अच्छे तैराक हैं. उन्हीं से उसने प्रशिक्षण प्राप्त किया है.

प्रदीप ने सन् 1967 में त्रिवेंद्रम में सर्व भारतीय स्तर पर होने वाली तैराकी प्रतियोगिता में भाग लिया. इस प्रतियोगिता में 900 मीटर रीले स्विमिंग में उसने दूसरा स्थान प्राप्त किया.

छाया : प्रदीप दास



सन् 1968 में कानपुर में होने वाली प्रतियोगिता में उसने भाग लिया और उसमें भी उसने दूसरा स्थान प्राप्त किया. उसी वर्ष अखिल भारतीय स्कूल गेम की वार्षिक प्रतियोगिता भिलाई में होने वाली थी. उसने पश्चिम बंगाल की ओर से इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहा. लेकिन ठीक उसी वक्त वह अस्वस्थ हो गया. अस्वस्थ रहने के बावजूद पिता की अनुप्रेरणा से उसने इस प्रतियोगिता में भाग लेकर पहला पुरस्कार प्राप्त किया.

सन् 1969 में ऑल इंडिया स्कूल गेम की क्रीडा प्रतियोगिता पूना में हुई. प्रदीप ने वहां की तैराकी प्रतियोगिता में पहला पुरस्कार हासिल किया. सन् 1970 में अगरतल्ला (त्रिपुरा) में हुई तैराकी प्रतियोगिता में भाग लेकर प्रदीप ने द्वितीय पुरस्कार जीता.

स्विमिंग के अतिरिक्त प्रदीप टेबल-टेनिस और क्रिकेट का भी एक अच्छा खिलाड़ी है. किताबें पढ़ना उस का शौक है.

प्रदीप भविष्य में अपने को एक प्रख्यात तैराक के रूप में देखना चाहता है. यही वजह है, वह हर रोज पांच-छह घंटे स्विमिंग का अभ्यास किया करता है. वह अंतर्राष्ट्रीय स्विमिंग प्रतियोगिताओं में भाग लेकर भारत का नाम रोशन करना चाहता है.

प्रदीप का कहना है कि उसकी सफलता का श्रेय उसके पिता को है. चूंकि उसके पिता एक अच्छे तैराक हैं, अतः बचपन से उसका भी लक्ष्य था कि सफल तैराक बने.

—प्रबीरकुमार

सुंदर लड़की से हुआ. वह भी क्रिकेट की बदौलत. रेखा जी एक मैच देखने आई हुई थीं, जिसमें अजित खेल रहे थे. पहली नजर में ही यह 'दूसरा प्रेम' हो गया. तब की वह रेखा हवारे अब रेखा अजित वाडेकर बन गई है.

सुविधा के लिए अजित ने ऐल्फिन्स्टन कॉलिज छोड़कर रुइया कॉलिज में दाखिला ले लिया और अपने 'प्रथम प्रेम' को परवान चढ़ाने की कोशिशों में लग गए. वह क्रिकेट के लिए घंटों शिवाजी के मैदान में अभ्यास करते, पसीना बहाते. बदले में क्रिकेट उन्हें अपनाता जाता और दिनोंदिन बेहतर क्रिकेटियर बनाता जाता. वह प्रसिद्ध होते गए. कॉलिज की, फिर बंबई विश्वविद्यालय की, और फिर रणजी ट्राफी की टीम में आ गए.

मगर उनकी पढ़ाई का क्या हुआ? "उस पर असर पड़ा," वाडेकर बोले, "मैं अपना फ़र्स्ट क्लास कैरियर बरकरार नहीं रख पाया. मगर मैंने पढ़ाई की तरफ से मुंह भी नहीं मोड़ा. इम्तहान के दिन आते ही मैं जमकर पढ़ने लगता." इस तरह वह सेकंड क्लास बी.एस-सी. करने में कामयाब हुए. उनके विषय थे भौतिक शास्त्र और गणित.

उन का प्रारंभिक क्रिकेट जीवन कैसा रहा? बहुत सफल. विश्वविद्यालयीन क्रिकेट में पहले ही साल (1958 में) उन्होंने रिकार्ड तोड़ बल्लेबाजी दिखा दी. दिल्ली विश्वविद्यालय के विरुद्ध फाइनल में उन्होंने 285 रनों का चंद्रमान का रिकार्ड तोड़ते हुए 324 रन बनाए. उनका यह रिकार्ड बारह साल तक कायम रहा और 1971 में गावसकर के हाथों टूटा.

रणजी ट्राफी में भी उन्होंने आते ही धाक जमा दी. मद्रास के विरुद्ध पहले (प्रतियोगिता के क्वार्टर फाइनल) मैच में 30 रन. अगले मैच में (सेना के विरुद्ध) 89 रन और फाइनल में बंगाल के विरुद्ध 24 और 85. लगातार सफलता. अजित बंबई के स्थाई खिलाड़ी हो गए. 1961-62 के मौसम में उन्होंने राजस्थान के विरुद्ध 235 रन बनाए, जो तब तक उन की सर्वोच्च रन संख्या रही. जब तक वह खुद ही तिहरा शतक बना कर (1967 में) उससे आगे नहीं निकल गए.

प्रारंभिक सफलता जब मिली, तब 4 जनवरी 1941 को जनमे वाडेकर महज उन्नीस बरस के किशोर थे. कम उम्र में बड़ी शोहरत और बड़ी शोहरत से जुड़े कई भटकाव. मगर वाडेकर ने पैर जमीन पर ही रखे और पढ़ाई-लिखाई से ध्यान हटने न दिया. "मैंने रमाकांत देसाई जैसे अच्छे क्रिकेटियरों से सबक लिया, जो किसी कारण से पढ़-लिख नहीं पाए थे. उन्हें क्रिकेट से सन्यास लेने के बाद रोजी-रोटी के लिए संघर्ष करना पड़ता था. इस हकीकत ने मुझे गहरे से छुआ और मैंने जाना कि समाज में अच्छा स्थान पाने के लिए पढ़ा-लिखा होना जरूरी है. 'पराग' के किशोर पाठकों को मैं यही बात महसूस कराना चाहता हूं. कभी ऐसा भी हुआ कि इम्तहानों की वजह से मैं बड़े-बड़े मैचों में चुने जाने के बावजूद खेलने नहीं गया."

उनकी ध्येयनिष्ठा रंग लाई. आज वह एस.बी.आई. (अंतर्राष्ट्रीय) में अच्छी जगह पर हैं और क्रिकेट में. . . कहना ही क्या!

मगर जिस भारतीय टीम के वह आगे चलकर सफलतम कप्तान बने, उसमें स्थान पाने के लिए ही उन्हें बहुत संघर्ष करना पड़ा. संघर्ष का दौर चला आठ साल! यों वाडेकर बहुत अच्छा खेलते, ढेरों रन बनाते, मगर जब भी किसी विदेशी टीम के आने का या भारतीय टीम के विदेश जाने का समय आता, उन का बल्ला उन से रूठ जाता और 'फार्म' के आधार पर उन का चुनाव होने से रह जाता.

●

अंत में 1966 में वह चुन ही लिए गए, वेस्ट इंडीज के विरुद्ध बंबई टेस्ट में. उन्होंने पहली पारी में 4 और दूसरी में सिफ़र स्कोर किया. अगला टेस्ट आने तक बीमार पड़ गए. श्रृंखला के तीसरे और अंतिम टेस्ट में उन्हें अवसर दिया गया. पहली पारी में वह फिर असफल रहे. फिर आई उन की श्रृंखला की अंतिम पारी. उन का क्रिकेट जीवन बहुत कुछ उसी पारी पर निर्भर करता था. पारी शुरू हुई. वाडेकर बनाम हॉल और ग्रिफ़िथ.

क्या नतीजा रहा? चौके पर चौके, हाल की बंपर पर छक्का! वाडेकर ने 67 रन किए. कुछ माह बाद इंग्लैंड जाने वाली टीम में उन का नाम आ गया.

तब से आज का दिन है. अजित ने पीछे मुड़ कर नहीं देखा. इंग्लैंड में उनकी सुलझी हुई बल्लेबाजी ने देखने वालों के दिल बाग-बाग कर दिए. आस्ट्रेलिया के दौरे पर (1968) में वह चंद सफल बल्लेबाजों में रहे. न्यूजीलैंड में उन्होंने शतक जमाया. 1969 में न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया की टीमें भारत आईं. श्रृंखला खत्म हो जाने के बाद पारखियों ने कहा, 'वाडेकर इस समय भारत का सब से ज्यादा गुणी बल्लेबाज है.'

रन-संख्या और औसत के मामले में अजित किसी से उन्नीस रहे तो पटौदी से.

1971 में उन्हें टेस्ट कप्तान बना दिया गया. तब से उन्होंने जो किया है वह हमारे क्रिकेट के सब से कामयाब दौर का इतिहास बन गया है.

●

"लीजिए लीजिए," डिब्बा उठाए अजित कह रहे हैं. मुझे उस में से कुछ किशमिश और बादाम उठाने पड़ते हैं. अजित छायाकार शर्मा जी की तरफ डिब्बा बढ़ाते हैं, मगर वह किशमिश लेने के बजाए काजू की पोटली ले लेते हैं.



छाया : चित्रशाला

हम अजित के प्रभादेवी वाले फ्लैट के रसोई-घर में हैं. रसोईघर क्या किचिन कहिए—सनमाइका की फ्रेमों में मढ़े गए शोकेस, फ्रिज और ओवन से सजा आधुनिक रसोईघर. ठाकुर जी की स्थापना भी शोकेस के एक खाने में की गई है. अजित ने बताया कि वह पूजा-पाठ के बड़े पाबंद हैं.

"किस किस की पूजा करते हैं आप?"

"भगवान की, क्रिकेट की," और शरारत से रेखा जी की तरफ देख कर, "इन की!"

"और गेंदबाजों की?"

"वह तो वही जानें!"

●

ड्राइंग रूम में एक तरफ बालकनी है, जिस में से सामने का मैदान नजर आता है. वहां क्रिकेट चल रहा था. टहलते हुए अजित बालकनी में जा खड़े हुए और मैदान में जुटे लड़कों को देखने लगे ध्यान से, जैसे भविष्य के किसी अजित वाडेकर को खोज रहे हों. वह भी तो कभी नौसिखिए ही थे, खुले मैदान में खेलने वाले.

—शाहिद शकील


नया पारले मारी बिस्किट का
मज़ा चाय के साथ लीजिए
PARLE
MARIE
ग्लुको, मोनेको और अन्य
स्वादिष्ट बिस्किटों के उत्पादक पारले
आपके लिए खास पेश करते हैं–
चाय की लज़्ज़त बढ़ानेवाला–
पारले
मारी
बिस्किट
अनोखे स्वादवाला – फॉइल पैकिंग में

चौथी रैगिंग (पृष्ठ 13 से आगे)

(पृष्ठ 13 से आगे)

क्या सुंदर नहीं है क्या? गेट आउट! टेक दीवार किस प्लास्टर . . . ."

वाक्य पूरा किया रेखा ने—"एंड ब्रिंग कोक-टेल फॉर आस!"

किरण पर्स लेकर मार्केट की तरफ दौड़ गई.

लैक्चर थियेटर का लंबा फ्रंट बैंच बिल्कुल खाली पड़ा था. उस पर चाक से लिखा था—केवल महिलाओं के लिए. रोज किरण फ्रंट बैंच पर बैठती थी. वह उस बैंच को खाली देख कर मुस्कराई और पिछले बैंच पर जा बैठी. क्लास में शोर उठना शुरू हो गया. तभी लैक्चरार आ गए और शोर कम गया. पीछे बैठे लड़के आगे आ गए. साथ ही किरण भी!

पीरियड खत्म हुआ. किरण बाहर निकली. किसी ने उसके ब्लैक स्लैक्स और जालीदार ब्लैक कुर्ते के कंबीनेशन पर छींटा कसा—"ब्लैक रोज!"

किरण ने तुरंत घूम कर कहा—"थैंक्स!"

तालियां पिट गईं. छींटा कसने वाला लड़का झेंप कर लड़कों के रेले में गुम हो गया.

कालेज से छुट्टी हुई.

सड़क के किनारे कई सीनियर मासूम फ्रैशर राकेश पांडे की रैगिंग कर रहे थे.

किरण वहां से गुजरी तो राकेश पांडे उसके पास आया. रोतड़े स्वर में बोला—"मिस . . . . मिस किरण! सीनियर्ज कहते हैं कि मैं आपका हाथ किस करूं!"

किरण ने तपाक से पूछा—"मेरे तो दो हाथ हैं. कौन-सा हाथ?"

राकेश पांडे भौंचक्का रह गया. किरण विजय-भाव से मुस्करा कर आगे बढ़ गई.

होस्टल पहुंचने तक उत्साहित किरण ने कितनी ही बातें सोच डालीं. अब वह बेकंवाप से हमीदा भी चलाएगी. कोई सीनियर अनाप-शनाप सवाल करेगा तो बेधड़क वैसा ही उत्तर जड़ देगी. कल ही वह स्वीमिंग-क्लब की मेंबर बन जाएगी. सीनियर लड़कियों की थोड़ी-बहुत मक्खनबाजी भी करेगी. देखती हैं, कोई कैसे तंग कर लेगा?

किरण इक्के मार्केट जा रही थी. सीनियर लड़कियां गेम्ज-रूम में जमा थीं. किरण ने सीमा से पूछा—"सीमा, कोक-शेक लाऊं?"

सीमा दहाड़ी—"डोंट डिस्टर्ब! नो कोक-शेक. नन कुल्हड़ में ट्वैल्व रसगुल्लाज!"

किरण रसगुल्ले ले आई. सीमा ने प्रेम-भाव से पूरा रसगुल्ला एक साथ उदरस्थ करते हुए कहा—"हम तेरी सीनियर-भक्ति से प्रसन्न हैं. भगवान, सब लड़कों के मुंह पर कोलतार पोत कर केवल तुझे ही डिस्टिंक्शन दे."

रेखा बोली—"सीमा को रोज दो सौ ग्राम चाकलेट और सुनहरा पोलसन लगाती रहेगी तो वह तुझे भी डिस्टिंक्शन दिलवा देगी."

'तुझे भी' सुनकर किरण विस्मित हुई. क्या सीमा डिस्टिंक्शन होल्डर है? सारा समय उछलने-कूदने वाली सीमा!

किरण श्रद्धानत होकर सीमा से बोली—"आप मुझे पढ़ाई में गाइड करेंगी न?"

सीमा बिफर पड़ी—"इडियट! पहले तो मैं तुझे गुड़िया से लड़की बनाऊंगी."

मनीषा बोली—"देखना कहीं बेचारी को गुड़िया से बुढ़िया मत बना देना."

सब लड़कियां खिलखिला पड़ीं.

किरण उस रात सोने चली तो स्वयं को बहुत हल्का अनुभव कर रही थी. सुबह-सुबह किसी ने दरवाजा खटखटा कर किरण को जगा दिया. चौकीदार के साथ पप्पा खड़े थे.

"पप्पा!" किरण बच्चे की तरह लिपट गई.

कुर्सी पर बैठ कर पप्पा ने कहा—"बिल्लो, तुम तो पांच दिन में ही इतनी दुबला गई. सचमुच यहां तीन किस्म की रैगिंग होती है—एक बस स्टाप के सामने वाली, दूसरी स्टाप से थोड़ा पीछे, तीसरी स्टाप से थोड़ा आगे."

पप्पा हंसे. किरण ने अचरज से पूछा—"यह आप कैसी-कैसी बातें करते हैं, पप्पा!"

"अरे तुम्हारी स्मरण-शक्ति भी सीनियर बांट गए. भगवान भला करे उनका. यह पढ़ पढ़ कर मैंने मिरांडा हाउस में तुम्हारी एडमिशन करवाई और यहां दौड़ा आया."

"पप्पा, गड़े मुर्दे मत उखाड़िए, प्लीज. वह पत्र तो मैंने साठ घंटे पहले लिखा था."

"क्या हुआ है तुम्हें! फिर इरादा बदल गया!"

"हां पप्पा, मैं इंजीनियर ही बनूंगी!"

"मैं धोबी का कुत्ता नहीं हूं बिल्लो, कभी यहां, कभी वहां! अब तुम्हें चलना ही होगा."

"किंतु पप्पा . . . ."

"नो किंतु-परंतु!"

"पप्पा, आप समझते क्यों नहीं?"

किरण रुआंसी हो गई. सहसा पप्पा ठहाका मारकर हंसे. बोले—"मैं तुम्हें समझाने आया था, किंतु तुम तो पहले ही समझी बैठी हो. यह लो, एंटरटेनमेंट के लिए ट्रांजिस्टर!"

पप्पा ने अटैची खोल कर ट्रांजिस्टर किरण की ओर बढ़ाया. किरण का चेहरा खिल उठा. उसने बनावटी नाराजगी से कहा—"पप्पा, आप भी मेरी रैगिंग करने लगे."

"यह चौथी किस्म की रैगिंग है, बिल्लो!"

कमरा एक बारीक और एक मोटी खिल-खिलाहट से गूंज उठा. ●

9/6650, देवनगर, नई दिल्ली-5

मुफ्त का इनाम

पुरस्कृत नं. 5

● दो स्त्रियां स्वेटर बुनती हुई बातें कर रही थीं. एक ने कहा, "वाह, क्या फंदा डाला है इंदिराजी ने कि याह्या उसमें जो फंसे तो फिर निकलना ही मुश्किल हो गया."

दूसरी ने कहा, "लेकिन बहन, यह तो तुमने बताया ही नहीं कि वह स्वेटर किसका था?"

—कु. संध्याश्री, फतेहपुर.

0 **किसी को बताइये मत. वह भारत के 'पराग' का स्वेटर था!**

● जनाब! घर घर वाही-तबाही बकते हैं तो इनाम थाने पर मिलता है. आप इनाम कहां देते हैं?

—कु. एस. शर्मा, जयपुर.

0 **अगर आप कहें तो हम दूसरे पर कब्जा जमा लें!**

● मैंने अपने मित्र से पूछा, "पराग के मुख-पृष्ठ पर किशोरियों का चित्र ही क्यों छपता है, किशोरों का क्यों नहीं?" उसने जवाब दिया, "क्योंकि पराग किशोरों की पत्रिका है."

—वेदप्रकाश अग्रवाल, डिटलागढ़.

0 **क्षमा कीजिये, 'पराग' पत्र है, 'पत्रिका' नहीं.**

● क्षमा चाहता हूं, मुझे लिखते हुए अफसोस हो रहा है कि पागल कुत्ते ने काटा मुझे था, किंतु देख रहा हूं कि असर आप पर हो रहा है.

—उदयप्रताप सिंह राठौर, गुना.

0 **और दर्द आपको!**

● झटका झटका झटका
जहां नहीं है झटका, वहां रहा है खटका,
जो अटका सो लटका, जो लटका सो झटका,
जो झटक गया वह खटक गया
जो लटके में था लटक गया
जो झटके में था निकल गया

—डा. पुरुषोत्तमदास शर्मा, आगरा.

0 **सिर्फ घूम रह गई!**

मुफ्त का इनाम

एक पोस्ट कार्ड पर कुछ भी लिखिए—वाही-तबाही बकिए, खुशामद कीजिए, चमकाइए, मजाक उड़ाइए, चकराइए, भरमाइए, व्यंग्य-पूर्ण आलोचना कीजिए—लेकिन हो सब शालीनता की सीमा के अंदर-अंदर! उद्देश्य है विशुद्ध मनोरंजन! प्रकाशित कार्डों में से एक चुने हुए श्रेष्ठ कार्ड पर पंद्रह रुपए की पुस्तकें पुरस्कार में दी जाएंगी. अपना कार्ड 20 अप्रैल तक इस पते पर भेजिए: संपादक 'पराग', (मुफ्त का इनाम-8), 10 दरियागंज, दिल्ली-6.

गिल्ली-डंडा

डंडा बोला-आ भई, गिल्ली!
अभी तुझे पहुंचा दूं दिल्ली,
दिल्ली से जब वापिस आना,
मेरे लिए मिठाई लाना!
गिल्ली बोली, डंडे भैया,
कौन गांठ से खर्चा रुपैया!

—सीताराम

लाओ छुट्टे पैसे

भालू मामा निकले घर से
जाना जल्दी बाजार ;
बस-अड्डे पर देख भीड़ को
अक्ल खा गई चक्कर!
राम राम कर तीस मिनट में
बारी आई जैसे;
कंडक्टर ने कहा रोक कर
"लाओ छुट्टे पैसे!"

—गीता मुखर्जी

नंबर रांग

बजती घंटी देख उठाया
मूषक जी ने फोन;
बड़ी अदा से बोले उस में,
"हैलो, कहिये, कौन?"
म्याऊँ-म्याऊँ पड़ा सुनाई
लगी कांपने टांग;
[illegible] पड़े मूषक जी झटपट,
"मैडम, नम्बर रांग!"

—पूनम तिवारी



बाल-पराग

छाया : नरेंद्र एन. शाह

रंग भरो प्रतियोगिता नं. 115 का परिणाम

'पराग' की रंग भरो प्रतियोगिता नं. 115 के जिन तीन प्रतियोगियों के चित्रों को पुरस्कार योग्य चुना गया है, उनके नाम और पते इस प्रकार हैं :

- उत्तमन बरुआ, द्वारा एन. एन. बरुआ, नं. 1 हेस्टिंग रोड, इलाहाबाद.
- कु. मनिका पाल, द्वारा श्री मदनमोहन पाल, क्वा.क नं. 557 (एफ), बिछिया रेलवे कालोनी, गोरखपुर (उ. प्र.)
- साधना डांड, द्वारा श्री सत्यपाल डांड, जवाहर नगर, रामपुर (उ. प्र.)

प्रयास करने वालों में से इनके प्रयास अच्छे रहे:

मधूलिका वर्मा, कानपुर; संजयकुमार अग्रवाल, कलकत्ता; कु. विमला अवस्थी, सीतापुर; पुरुषोत्तमलाल यादव, उदयपुर; राजेश कपूर, कलकत्ता; सुरेशचंद्र सोनी, मथुरा; विनोदकुमार, रांची; नरेंद्रप्रसाद शर्मा, देहरादून; राकेशकुमार शर्मा, रामपुर; लीली-कुमारी, हजारीबाग; कु. ललिता द्विवेदी, लखनऊ; कु. हंसी मेहरा, नैनीताल; रामेश्वर चौधरी, कोरापुट; अनीता कपूर, कालागढ़; रत्नाकर दीक्षित, वाराणसी; अशोक श्रीवास्तव, बहराइच; ज्योति हंगोले, दिल्ली; कु. सुधा चतुर्वेदी, सतौली; कल्पना सिन्हा, धनबाद; उमाकुमारी श्रेष्ठ, सीतापुर; साधना अग्रवाल, नैनीताल; प्रदीप रायजादे, बदायूं; मंजु सिंगल, झांसी; राजेश केशरवानी, कानपुर; नीलम, देहरादून; कु. सुनीता गुप्ता, बड़ौदा; कुलदीप-कुमार, नई दिल्ली; साजिद जमाल, अलीगढ़; श्रीकृष्ण वर्मा, ललितपुर; मंजु शर्मा, देहरादून; पूनमकुमारी, यमुनानगर; हेमंतकुमार उप्रेती, रानीखेत; सतनामसिंह, लखनऊ; राकेशकुमार, हापुड़; रमेशदत्त ओझा, दिल्ली; राजेशकुमार, दिल्ली; नवनीतकुमार, रामपुर; पुष्पा बंसल, कानपुर; श्याम अरोरा, बंबई; राजेंद्रप्रसाद, अंबरनाथ; कविता बिड़ा, पीलीभीत; सीमा दे, कटेर; कु. रजनी सोनी, बिलासपुर; अनिल कुमार, दिल्ली; आशुतोषकुमार, रायगढ़; मोहनकुमार, कोरापुट; रविकुमार, शाहदोल; गौरीशंकर, सीकर; श्रीमारानी जैन, देहरादून; रेनू कपूर, देहरादून; समीर माथुर, हरिद्वार; राजेंद्र कुमार, शाहजहांपुर; रईसअहमद खां, बहराइच •

'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता-118

बच्चो, नीचे का चित्र है न मजेदार! काश, यह रंगीन होता, तो क्या ही कहना था!

चलो, तुम ही रंग भरकर इसे हमारे पास 10 अप्रैल तक भेज दो. हां, अगर तुम्हारा खयाल हो कि चित्र की पृष्ठभूमि को तुम अपनी कल्पना से और ज्यादा उभार सकते हो, तो रंगों द्वारा उसे चित्रित करने की तुम्हें स्वतंत्रता है. सबसे अच्छे रंग भरने वाले तीन प्रतियोगियों को एकसे सुंदर इनाम मिलेंगे. लेकिन रंग भरने वालों की उम्र 12 साल से अधिक नहीं होनी चाहिए और उन्हें 'वाटर कलर' ही उपयोग में लाने चाहिए. चित्र के नीचे वाला कूपन भरकर भेजना जरूरी है. प्रविष्टियां भेजने का पता : संपादक, 'पराग' (रंग भरो प्रतियोगिता नं. 118), 10 दरियागंज, दिल्ली-6.

यहां से काटो



यहां से काटो

कूपन

'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता-118

नाम और उम्र ____________________

पूरा पता ____________________

____

यहां से काटो

"पराग" के लिए विशेष भेंट-वार्ता

www.kissekahani.com



दो फुट का अभिनेता

शाहिद नक़वी

तलाश कु. लक्ष्मी छाया की थी और हम उसके पीछे स्टूडियो-स्टूडियो फिर रहे थे. मिलना तय हुआ था दादर के रनजीत स्टूडियो में. वहां पता चला कि आज की शूटिंग कैंसिल हो गई है और लक्ष्मी छाया कहीं रिहर्सल करने चली गई है. कहां?

'श्री साउंड स्टूडियो में,' किसी ने झमका दिया. मगर यह हमें बाद में पता चला कि वह वह सिर्फ 'झमका' था. उस वक्त तो हम उसे प्रामाणिक जानकारी ही समझे और श्री साउंड स्टूडियो की तरफ चल दिए.

वहां पता चला लक्ष्मी छाया की तो छाया भी मौजूद नहीं है. 'एक फ़िल्म की शूटिंग जरूर चल रही है,' बताया गया.

'देखा जाए, क्या चल रहा है,' हमने विचारा और फ्लोर नंबर दो की दिशा में कदम बढ़ाए.

वहीं हमारा नत्थूराम जी से साक्षात्कार हुआ. हम पूर्व की ओर उत्तर की दिशा से फ्लोर नंबर दो के गेट नंबर एक की तरफ बढ़ रहे थे कि उत्तर दिशा से नत्थूराम आते दिखाई दिए. दिखाई दे गए यह भाग्य की ही बात है, क्योंकि ज़मीन कुछ ऊबड़-खाबड़ थी और हमें सिर झुकाकर चलना पड़ रहा था, वरना शायद उनके चौबीस इंची जिस्म पर से हमारी नज़र फलांग कर निकल जाती. यों उनकी चाल स्व. किशकोमा जैसी थी.

मेरे सूक्ष्मदर्शी मित्र एम. सी. शर्मा ने तो उन्हें एकदम ताड़ लिया, "देखिए—देखिए, यह कौन!" मगर देखते-देखते वह नन्हा आदमी तीन सीढ़ियां चढ़ कर सामने के दरवाजे में घुस गया और नज़रों से ओझल हो गया.

शर्मा जी उत्सुक हो गए थे. पूछताछ करने लगे, "यह गिट्टा आदमी कौन है?"

"एक्टर है!" पत्थर की सिल पर टांगें फंसा-कर बैठे एक सज्जन ने बीड़ी फूंकते हुए कहा, 'मेरा नाम जोकर' में आया है. अभी राजेश खन्ना के साथ एक पिक्चर में आता है!" आता है, यानी 'आने वाला' है. अब मैं भी उत्सुक हो गया.

हम सेट में घुसे. अंदर सत्येन बोस की फिल्म का सेट लगा हुआ था, स्टेज डांस का. गुफाएं-सी बनाई गई थीं, जिन पर छितरे हुए डिज़ाइन थे. उन पर और फ़र्श पर ढेर-सा हरा रंग फैला पड़ा था. हमने ट्राली पर कैमरे को गुफा में घुसे जाते देखा. खूब सरगर्मी थी.

तभी शर्मा जी ने उन गिट्टे महाराज को स्पाट कर लिया, "वह देखिए, वह रहे!" एक कोने में दीवार से सटकर बैठे हुए.

छाया : चित्रशाला







छाया : चित्रशाला

हम उन्हें बाहर खींच लाए. अजीब दृश्य था. आगे-आगे दो फुटे वह, और पीछे-पीछे लंबे-लंबे हम कुछ इस अंदाज में जैसे मुर्गी पकड़ रहे हों. हमें देखकर ताड़ की तरह ऊंचे और दुबले एक सज्जन भी उधर आ गए और नीचे गगन के तले एक बेंच पर हमारा इंटरव्यू शुरू हो गया.

इंटरव्यू और चित्रों का सिलसिला करीब दो घंटे चला. उस बीच हमें नत्थूराम के व्यक्तित्व और जीवन के कई दिलचस्प पहलुओं का परिचय मिला.

वह 29 मई 1951 को नागपुर में पैदा हुए थे. जब से होश संभाला, अपना कद उतना का उतना पाया. यार-दोस्त वक्त के साथ लंबे होते गए, उन्हें दो फुट पर ही छोड़ गए.

तब शायद उन्हें अपनी विचित्रता पर अफसोस होता हो, अब नहीं होता. कद के बल पर वह लाखों में एक बन गए हैं. अपनी लंबाई के अनुसार उन्होंने अपने को ढाल लिया है: अब ठाठ से बस में सफर करते हैं, पिक्चर देखते हैं, खाते पीते हैं. जहां भी जाते हैं, भीड़ उनके पीछे पड़ जाती है, पर वह बुरा नहीं मानते. राजेश खन्ना के पीछे भी तो भीड़ पड़ी रहती है!

उन्होंने नवमी तक पढ़ा. बचपन से फिल्मों का चस्का था इसलिए पढ़ाई छोड़ दी. बंबई आ गए, श्री साउंड स्टूडियो में डेरा डाल दिया.

पहली फिल्म मिली: 'इंसाफ का मंदिर'. नत्थूराम को उसमें दिलीप दत्त, चिट्ठी और टुनटुन के भाई पोलसन का दादा जान बनाया गया. पोलसन और नत्थूराम साथ-साथ ऐसे लगते थे, जैसे टाइमपीस के साथ रिस्टवाच!

दूसरी फिल्म मिली 'मेरी भाभी'. उसमें महमूद के साथ काम किया. "महमूद साहब बहुत हौसला बढ़ाते हैं. साथ वाले आर्टिस्ट को आगे करने की पूरी कोशिश करते हैं." 'मेरी भाभी' में नत्थूराम का एक शाट (3-4 सैकंड) लेना था. महमूद भाई ने डायरेक्टर से कह कर कई मिनट का करवा दिया.

फिर 'बांदी', 'मेरा नाम जोकर' और 'अनीता' आईं. 'मेरा नाम जोकर' में फिल्म इतिहास के सब से ठिगने कामेडियन नत्थूराम और कद से लंबे कलाकार यशवंत का साथ हुआ—'आगे ही नहीं, पीछे भी' वाले गाने में. वहीं आकर बैठ गए सज्जन यशवंत साहब ही थे, जो उस जमाने से फिल्मों में हैं, जब सायरा बानो की अम्मीजान हीरोइन हुआ करती थी और रणधीर कपूर के दादा पृथ्वीराज हीरो. 'मर्यादा' में नत्थूराम बिन्दु के डांस मास्टर बन कर आए.



उनकी आने वाली फिल्मों में 'तूफान' और 'एक बेचारा' हैं, जिनमें वह आज के दो सब से लोकप्रिय नायकों—राजेश खन्ना और जीतेन्द्र के साथ नृत्य करते दिखाई देंगे.

चार साल के छोटे-से फिल्मी कैरियर में नत्थू भाई ने काफी फिल्में कर ली हैं और वह इस लाइन में संतुष्ट हैं. आगे भी यहीं डटे रहेंगे.

फोटो-खिंचाई के दौरान हमने उन्हें मस्का लगाया जाते हुए देखा. वह निर्लिप्त भाव से मस्का लगवाते रहे. इसी निर्लिप्त भाव से वह अपने परिचितों के मजाक और प्रशंसा स्वीकार करते हैं. कल को वह प्रोड्यूसर बन जाएं तो उन्हें अपनी चाल-ढाल को बदलना नहीं पड़ेगा.

नत्थूराम से विदा ले कर जब हम मुड़े तो शर्मा जी बोले, "देखा न इस पिद्दे महाराज को!" मैंने योंही पीछे मुड़कर देखा. नत्थूराम चले जा रहे थे. ऐसे जैसे चाबी लिपटे पिट्टू को सुई बांध कर लुढ़का दिया गया हो! ●